Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page I

वर्ष 66 अंक 2

ISSN 2231-2439
जुलाई-दिसंबर 2022

प्रौढ़ शिक्षा

प्रौढ़, सतत एवं आजीवन शिक्षा जगत का मुख पत्र

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page II

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

1939 में स्थापित भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ का उद्देश्य व्यक्ति के जीवन की गुणवत्ता में, शिक्षा के माध्यम से अभिवृद्धि करना है, जिसे यह निरन्तर एवं आजीवन प्रक्रिया के रूप में देखता है। संघ प्रौढ़ शिक्षा को एक प्रक्रिया, कार्यक्रम और आन्दोलन के रूप में गतिशील बनाने की दिशा में प्रतिबद्ध है। संघ प्रौढ़ शिक्षा के प्रसार में कार्यरत स्वंयसेवी संगठनों, विश्वविद्यालयों, शासकीय, राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं के कार्यकलापों से समन्वय करता है। संगोष्ठियों एवं सम्मेलनों का आयोजन और प्रौढ़ शिक्षा के विभिन्न आयामों पर निरंतर सर्वेक्षण तथा शोध के साथ, संघ अपने सदस्यों की प्रौढ़ शिक्षा विषयक जानकारी में नवीनता एवं प्रखरता बनाए रखने के लिए समूचे विश्व में अद्यतन विचार और अनुभव प्रस्तुत करने का निरन्तर प्रयत्न करता रहता है। प्रौढ़ शिक्षा के क्षेत्रों में अनुसंधान हेतु विभिन्न प्रयोगात्मक परियोजनाएं भी संचालित करता है। अपनी नीतियों के अनुसरण में संघ ने 'नेहरू साक्षरता पुरस्कार' एवं महिलाओं में निरक्षरता निवारण कार्य हेतु 'टैगोर साक्षरता पुरस्कार' की स्थापना की है।

डॉ. जाकिर हुसैन स्मृति व्याख्यान प्रतिवर्ष किसी मूर्धन्य शिक्षाविद् द्वारा दिया जाता है। संघ हिन्दी एवं अंग्रेजी शोध कार्य के लिए डा. मोहन सिंह मेहता फेलोशिप भी प्रदान करता है। संघ का अमरनाथ झा पुस्तकालय प्रौढ़, सतत् और जनसंख्या शिक्षा की सन्दर्भ सामग्री की दृष्टि से देश में अद्वितीय है। विविध सन्दर्भ पुस्तकों के संकलन के अतिरिक्त देश और विदेश से प्रकाशित प्रौढ़ शिक्षा संबंधी पत्र–पत्रिकाएं, सूचना एवं संदर्भ सामग्री भी इसमें उपलब्ध है। अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कार्य हेतु संघ की पहल पर प्रौढ़ एवं जीवनपर्यन्त अन्तर्राष्ट्रीय शिक्षा संस्थान (इंटरनेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ एडल्ट एंड लाईफलॉंग एजूकेशन) की स्थापना हुई। संघ प्रौढ़ शिक्षा विषय पर अनेक पुस्तकें व पत्रिकाएं प्रकाशित करता है, जो कि मुख्यतः प्रौढ़ शिक्षा कर्मियों और नवसाक्षरों के लिए है। संघ 'इण्टरनेशनल फेडरेशन आफ वर्कर्स एजूकेशन एसोसिएशन्स', एवं 'एशियन साउथ पेसेफिक एसोसिएशन फॉर बेसिक एण्ड एडल्ट एजूकेशन', 'इण्टरनेशनल कौंसिल आफ एडल्ट एजूकेशन' तथा 'इण्टरनेशनल लिटरेसी ऐसोसिएशन' से भी सम्बद्ध है। संघ की सदस्यता उन सभी व्यक्तियों एवं संस्थाओं के लिए खुली है जो इसके आदर्शों एवं लक्ष्यों में विश्वास रखते हैं और इस क्षेत्र में कार्य करने के लिए इच्छुक हैं।

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

17–बी इन्द्रप्रस्थ एस्टेट, महात्मा गांधी मार्ग, नई दिल्ली–110002
दूरभाषः 011–23379282, 23379306
फैक्सः 011–23378206,
ई–मेलः directoriaea@gmail.com, iaeadelhi@gmail.com
website: www.iaea-india.in; www.iiale.org

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 1

प्रौढ़ शिक्षा

जुलाई–दिसंबर 2022
वर्ष 66 अंक 2

सम्पादक मण्डल

डा. सरोज गर्ग
श्री मृणाल पंत
श्री ए.एच.खान
श्री राजेन्द्र जोशी
सुश्री निशात फारूख

सम्पादक
सुरेश खण्डेलवाल

सहायक सम्पादक
बी. संजय

इस अंक में

सम्पादकीय 2

आजीवन उच्च शिक्षा के जरिए रोजगार की बढ़ती संभावनाएं
– कल्पना कौशिक 4

असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं के अधिकार
– राकेश कुमार सिंह 7

गाँधी और हिंदी भाषा
– रमेश तिवारी 19

21 की उम्र लड़कियों के विवाह के लिए वरदान है या अभिशाप
– सौरभ मिश्र 25

युवा आबादी का लाभ
–जतिंदर सिंह 29

बाल संरक्षण
– समीरा सौरभ 33

स्वतंत्रता, समता एवं मानवाधिकार
– के. एस. द्विवेदी 39

बढ़ते अपराध और असंतुलित होता समाज
– ज्योति सिडाना 46

मूल्यः 200 रूपये वार्षिक

पत्रिका में व्यक्त लेखकों के विचार उनके वैयक्तिक विचार हैं जिनसे संघ एवं सम्पादकीय सहमति अनिवार्य नहीं है ।

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 2

सम्पादकीय

क्या कहता है एनएफएचएस-5

केन्द्रीय स्वास्थ्य मंत्रालय एवं इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ पोपुलेशन साइंशेस, मुंबई के द्वारा सम्मिलित रूप से किया गया राष्ट्रीय परिवार स्वास्थ्य सर्वेक्षण (नेशनल फैमिली हैल्थ सर्वे, एनएफएचएस–5) विश्व का सबसे बड़ा परिवार सर्वेक्षण है। इस सर्वेक्षण की रिपोर्ट ऐसे समय पर आयी है जबकि देश अपनी स्वाधीनता का 75वां वर्षगांठ मना रहा है और इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि एनएफएचएस–5 विगत 75 वर्षों के दौरान देश के आर्थिक एवं सामाजिक विकास के स्तर एवं उपलब्धियों के नागरिकों, विशेषरूप से उनके सम्पूर्ण स्वास्थ्य पर प्रभाव को रेखांकित करता है। यह सरकार एवं संबद्ध संस्थानों द्वारा वर्तमान में चलाए जा रहे विविध विकासात्मक कार्यक्रमों के प्रभाव को भी प्रामाणिक तौर पर लिपिबद्ध करता है और साथ हीं साथ आने वाले दिनों में सरकार खासतौर पर महिला एवं समाज कल्याण मंत्रालय द्वारा चलाए जाने वाले नवीन कार्यक्रमों एवं गतिविधियों की रूपरेखा तय करने हेतु आधार प्रदान करता है। केन्द्र सरकार एवं यूएसएड (USAID) द्वारा प्रायोजित इस सर्वेक्षण का उद्देश्य नागरिक स्वास्थ्य के आर्थिक एवं सामाजिक कारकों पर भी दृष्टिपात करना है।

एनएफएचएस–5 के दौरान दो चरणों, प्रथम चरण जून 2019 से जनवरी 2020 जिसके तहत 17 राज्यों एवं 5 केन्द्र शासित प्रदेशों तथा द्वितीय चरण जनवरी 2020 से अप्रैल 30, 2021 जिसके तहत शेष 11 राज्यों एवं 3 केन्द्र शासित प्रदेशों के कुल 6,36,699 घरों के 7,24,115 महिलाओं एवं 1,01,839 पुरूषों से प्रारंम्भिक शिक्षा में उपस्थिति, घरों में शौचालयों की उपलब्धता, मृत्यु पंजीकरण, विकलांगता, जीवन बीमा की सुरक्षा, सम्पति पर महिलाओं का अधिकार, गर्भावस्था के दौरान घरेलू हिंसा, माहवारी के दौरान स्नान करने का अभ्यास तथा गर्भपात के कारण व तरीका जैसे अनेक सूचकांकों पर जानकारी एकत्रित की गई। सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़े संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा निर्धारित सतत् विकास लक्ष्यों की दिशा में हुई प्रगति को नापने का आधार तैयार करेंगी।

एनएफएचएस–5 से प्राप्त आंकड़े बताते हैं कि देश में 15 वर्ष से कम आयु वाले लोगों की कुल आबादी 27 प्रतिशत है अर्थात् देश जनांकीकिय लाभांश की स्थिति में है। वहीं 60 वर्ष के उपर के लोगों की कुल आबादी 12 प्रतिशत है। परिवारों का आकार सिकुड़ता दिख रहा है। सन् 2015–16 के दौरान किये गये एनएफएचएस–4 में औसत परिवार का आकार 4.6 व्यक्ति प्रति परिवार था जो सन् 2019–21 में हुए एनएफएचएस–5 में सिकुड़कर 4.4 व्यक्ति प्रति परिवार हो गया है। वहीं महिला प्रधान परिवारों की संख्या भी 15 प्रतिशत से बढ़ कर अब 18 प्रतिशत हो गई है।

साक्षरता की दृष्टि से देश प्रगति पथ पर है। एनएफएचएस–5 के अनुसार भारत में अब पुरूष साक्षरता दर 84 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 72 प्रतिशत हो गयी है। पर बिहार एवं केरल जैसे राज्यों में तुलनात्मक रूप से विपरीत परिस्थितियां बनी हुई हैं। बिहार में पुरूष साक्षरता दर 76 प्रतिशत और महिला साक्षरता दर 55 प्रतिशत है, वहीं केरल में लगभग सार्वभौमिक साक्षरता की स्थिति है। महिला साक्षरता के लिहाज से ग्रामीण महिलाओं में साक्षरता दर का बढ़ना एक सकारात्मक अध्याय है यद्यपि यह बहुत बड़ा नहीं है। 10 वर्ष और उससे ज्यादा विद्यालयीन शिक्षा प्राप्त करने वाली महिलाओं की संख्या में भी उल्लेखनीय वृद्धि दर्ज हुई है। सन् 2015–16 में यह 35.7 प्रतिशत थी जो 2019–21 में बढ़कर 41 प्रतिशत हो गई है। ऐसा प्रतीत होता है कि महिलाओं ने भी डिजिटल माध्यमों को तत्परता से स्वीकार किया है क्योंकि शहरी क्षेत्रों की लगभग 51.8 प्रतिशत महिलाएं धड़ल्ले के साथ इंटरनेट का उपयोग करती मिली।

महिला सशक्तीकरण की दृष्टि से देखें तो एनएफएचएस–4 के दौरान 53 प्रतिशत महिलाओं का बैंक एकाउंट था। एनएफएचएस–5 के अनुसार अब 79 प्रतिशत महिलाओं के पास बैंक एकाउंट है। 70 प्रतिशत से भी अधिक महिलाओं का बैंक एकाउंट लगातार व्यवहार (चालू मोड) में पाया गया। संभवतः यह प्रधानमंत्री

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 3

जन–धन योजना के कारण संभव हो सका है। एनएफएचएस–5 के दौरान लिंगानुपात में भी महिलाओं की स्थिति बेहतर होती नजर आ रही है। विदित है कि एनएफएचएस–3 अर्थात 2005–06 में देश में लिंगानुपात 1000:1000 थी जो एनएफएचएस–4 (2015–16) में घटकर 991:1000 रह गयी थी। एनएफएचएस–5 में लिंगानुपात 1020:1000 पाया गया है। पारिवारिक निर्णयों में महिलाओं की सक्रिय भागीदारी में भी सकारात्मक परिवर्तन देखने को मिला है। एनएफएचएस–4 के दौरान केवल 11 राज्यों एवं दो केन्द्र शासित प्रदेशों की 90 प्रतिशत महिलाओं की पारिवारिक निर्णयों में सक्रिय भागीदारी दर्ज की गयी थी। एनएफएचएस–5 में 28 में से 16 राज्यों तथा 8 में से 6 केन्द्र शासित प्रदेशों की लगभग 90 प्रतिशत महिलाएं पारिवारिक निर्णयों में सक्रियरूप से भाग लेती पायी गयीं। शहरी क्षेत्रों में यह प्रतिशत 91 है जबकि ग्रामीण इलाकों में 87।

एनएफएचएस–5 के सकारात्मक पक्षों के साथ ही साथ कुछ आंकड़े अभी भी परेशान करने वाले हैं जैसे लगभग 19 प्रतिशत घरों में शौचालय का नहीं होना अर्थात् देश के लगभग पांचवे हिस्से के महिलाओं को आज भी खुले में शौच के लिए विवश होना पड़ता है। 41 प्रतिशत घरों में रसोई के लिए स्वच्छ ईंधन का अभाव है। यह भी चिंताजनक है कि फीमेल लेबर पार्टिसिपेशन रेट जो सन् 2019 में 20.3 प्रतिशत था महामारी के कारण जुलाई–सितम्बर 2020 में घट कर 16.1 प्रतिशत रह गया। ऐसा इसलिए कि भारत में महिला श्रमबल (15 वर्ष और उसके उपर की महिलाएं जो कार्य कर रही हैं अथवा रोजगार की तलाश में है) का बड़ा हिस्सा बगैर कौशल अथवा अति निम्न कौशलों वाले रोजगारों, फार्मों, उद्योगों तथा घरेलू क्षेत्रों में कार्य करती हैं जो सभी क्षेत्र महामारी के दौरान बुरी तरह से प्रभावित हुए थे। आंकड़े कहते हैं कि 15–49 आयु वर्ग के पुरूषों में 75 प्रतिशत रोजगार युक्त हैं जबकि महिलाओं में यह प्रतिशत मात्र 25 है। इससे भी अधिक चिंताजनक यह है कि कार्य कर रही महिलाओं में लगभग 15 प्रतिशत को सैलरी भी नहीं मिलती।

यह मौजूदा दौर के हालातों का संकेत है। बहरहाल 2021 की जनगणना का रिपोर्ट आना शेष है जिससे वास्तविक स्थिति की समुचित जानकारी प्राप्त हो सकेगी।

– बी. संजय

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 4

आजीवन उच्च शिक्षा के जरिए रोजगार की बढ़ती संभावनाएं

– कल्पना कौशिक

गौर करने पर पता चलता है कि 20 वीं सदी में रोजगार के पारंपरिक माने जाने वाले कई द्वार 21 वीं शताब्दी में आते–आते बंद हो गए पर साथ ही साथ कई नये द्वार खुले भी हैं। पिछली सदी में शिक्षा का मतलब था कुछ डिग्रियां मात्र बटोर लेना और उनके जरिए नौकरी प्राप्त कर लेना था। व्यापारी वर्ग के युवकों की उच्च शिक्षा में विशेष दिलचस्पी नहीं होती थी क्योंकि वे जानते थे कि अतंतः उन्हें गल्ले पर ही बैठना है। वे स्नातक के बाद अथवा उससे पहले ही पारिवारिक व्यवसाय में लग जाते थे। चाहे व्यवसाय के क्षेत्र के युवक हों अथवा नौकरी–पेशा क्षेत्र के, रोजगार में प्रवेश करने के बाद उन्हें अपने विषय या पाठ्य पुस्तकों से कुछ लेना देना नहीं होता था। इसीलिए रह–रह कर यह प्रश्न हर विद्यार्थी के मन में उठता था कि गणित और विज्ञान में पढ़ाई जाने वाली विषयवस्तु का व्यावहारिक जीवन में क्या उपयोग है और अगर कोई उपयोग नहीं है तो फिर ये सब पढ़ने की आवश्यकता ही क्या है? उस दौर में किताबी शिक्षा का व्यावहारिक जीवन से कोई विशेष सरोकार भी नहीं रहता था। देश–दुनिया की हलचलों से छात्रों का कोई सीधा संपर्क नहीं रहता था। तब तकनीक के अभाव में किसी से भी तत्काल संपर्क साधना मुश्किल था।

समय बदला है। वह चोंगेवाले टेलीफोन का जमाना था। अब इंटरनेट का युग है। दूर–दराज बैठे मित्रों या रिश्तेदारों से बात करने के लिए पहले ट्रंककॉल बुक करके घंटों इंतजार करना पडता था। आज हथेली में रखे मोबाइल के जरिए दुनिया के किसी कोने में बैठे व्यक्ति से लाइव बातचीत की जा सकती है। यह इंटरनेट का जमाना है, डिजिटल युग है, विज्ञान और तकनीक का दौर है। आज अपने विषय का सामान्य ज्ञान रखने से काम नहीं चलता। उसमें हो रहे अनुसंधानों की अद्यतन जानकारी रखनी होती है। अपने कौशल का निरन्तर विकास करते रहना होता है। आप कला संकाय के हों, विज्ञान संकाय हों अथवा वाणिज्य के छात्र ही क्यों न हो, डिजिटल तकनीक की जानकारी रखनी आवश्यक हो गई है। आज आजीवन शिक्षा प्राप्त करते हुए अपने कौशल का निरंतर विकास करते रहना होता है। छोटी–छोटी अवधि के पाठयक्रम कैरियर को विस्तार देने में सहायक होते हैं। ऐसे पाठयक्रमों को काम करते हुए घर बैठे ही किया जा सकता है।

भारत सरकार की नई शिक्षा नीति 2020 में भी इसका ध्यान रखा गया है। प्रधानमंत्री कौशल विकास योजना, मुख्यमंत्री कौशल विकास योजना आदि की पहल बदलते समय के मापदंडों के अनुरुप ही शुरु की गई है। उसमें अकुशल श्रमिक वर्ग को कौशल शिक्षा प्रदान करते हुए कुशल बनाने पर विशेष ध्यान दिया गया है। यह समय की मांग है। चाहे सरकारी स्तर पर हो अथवा निजी स्तर पर, ऑफलाइन हो

या ऑनलाईन, इसे अपनाना ही होगा और कुछ हद तक अपनाया भी जा रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी (आईटी) के क्षेत्र में इसकी गति काफी तेज हो चुकी है।

आज हजारों शैक्षणिक संस्थान ऑनलाइन मोड में संचालित हो रहे हैं। आप घर बैठे स्मार्ट फोन, लैपटॉप अथवा कंप्यूटर के जरिए उनमें प्रवेश पा सकते हैं। अपनी सुविधा एवं समय के मुताबिक शिक्षा ग्रहण भी कर सकते हैं और प्रदान भी कर सकते हैं। इच्छुक व्यक्ति ऐसे संस्थानों का संचालन भी कर सकते हैं। वे एक बार पाठयक्रम (कोर्स) तैयार करके उसे अपडेट करते हुए लोगों को जोड़ सकते हैं। कोरोनाकाल में लॉकडाउन के समय ऑनलाइन गतिविधियों में तेजी आई जो अब तक जारी है। तब वह विशेष परिस्थितियों की विवशता थी लेकिन आज यह जीवन का अहम हिस्सा बन चुकी है। आजकल लोग वर्क फ्रॉम होम के जरिए काम करना पसंद करते हैं। रोजगार प्रदाताओं के लिए भी यह एक सुविधाजनक व्यवस्था है। ऐसे में व्यक्ति रोजगार करने के साथ–साथ नए–नए पाठ्यक्रमों में नामांकन कर कौशल संवर्धन को अपनी दिनचर्या में शामिल कर सकते हैं। इस प्रकार वे अपनी दक्षता को निरंतर विकसित कर सकते हैं।

यह रोजगार मूलक शिक्षा का जमाना है। जहाँ एक ओर आप नौकरी करते हुए अथवा रोजगार के अन्य किसी माध्यम से अपनी आजीविका चलाते हुए आजीवन शिक्षा ग्रहण कर सकते हैं वहीं दूसरी ओर आजीवन शिक्षण माध्यमों से अपनी दक्षता का विस्तार करते हुए रोजगार भी कर सकते हैं। आज छात्रों का नजरिया भी बदल रहा है। पहले रोजगार के लिए शिक्षा प्राप्त की जाती थी अब रोजगार और शिक्षा का कदमताल हो रहा है। शिक्षा मात्र ज्ञान के लिए नहीं बल्कि यह रोजगार का जरिया बन चुकी है। हाल ही में कुछ अंतर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों में एक सर्वेक्षण के दौरान 80 प्रतिशत छात्रों ने शिक्षा को रोजगार का एक बेहतर जरिया माना है। लेकिन पारंपरिक शैक्षणिक संस्थानों में छात्रों की यह चाहत पूरी नहीं हो पाती है। रोजगार के लिए कोडिंग, मार्केटिंग और सेल्स जैसे कितने ही कौशल हैं जिनकी पूरी दुनिया में मांग बढ़ रही है। आने वाले समय में इस प्रकार के कौशलों का दायरा बढ़ता ही जाएगा।

आर्थिक क्षेत्र में निरंतर नए बदलाव आ रहे हैं जिसके कारण रोजगार और अध्ययन से जुडा परिदृश्य क्रमशः बदलता जा रहा है। एक नया मॉडल तैयार हो रहा है। यही कारण है कि कामकाजी जीवन में प्रवेश करने के बाद भी पढ़ते और सीखते रहने की जरुरत पड़ रही है। और इसका प्रचलन लगातार बढ़ता जा रहा है। छोटी–छोटी अवधि वाले तकनीकि शिक्षा पाठयक्रमों के प्रति युवा वर्ग का रुझान बढ़ रहा है जो आर्थिक क्षेत्र के नये मॉडल के अनुकूल है। शैक्षणिक संस्थान इन बदलावों को अपनाने का प्रयास कर रहे हैं। आने वाले समय में तकनीकि शिक्षा के इस क्षेत्र में नए इनोवेशन की उम्मीद की जा सकती है। यह नूतन प्रयोग निश्चित रुप से रोजगार के नए अवसर प्रदान करने में सक्षम होगा।

आज आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस की सुविधाओं के जरिए बहुत सारे लर्निंग प्लेटफार्म चल रहे हैं और बहुराष्ट्रीय कंपनियां उनके पाठयक्रमों (कोर्स) को मान्यता भी दे रही हैं। ऐसी अनेकों कम्पनियां हैं जिनके कर्मचारी यदि कोई नया कोर्स पूरा करते हैं तो उन्हें तत्काल तरक्की दी जाती है। उनके हुनर की कद्र

की जाती है। लेकिन यह भी सच है कि ऑनलाइन शिक्षा कमजोर छात्रों के लिए फायदेमंद नहीं है क्योंकि इस तरह के कोर्स को समझने के लिए बौद्धिक क्षमता विकसित होनी चाहिए। वहीं जो कुशाग्र बुद्धि के छात्र हैं और जिनके अन्दर सीखने की ललक है उनके लिए आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आधारित शिक्षा व्यवस्था विज्ञान और प्रौद्योगिकी के वरदान के समान है। यह व्यवस्था कामकाजी लोगों के कौशल में निरंतर चमक प्रदान कर रही है। निश्चित रुप से यह परंपरागत शैक्षणिक संस्थानों की शिक्षा की तुलना में कम खर्चीली है और इसने ऐसा माहौल तैयार कर दिया है कि उच्च एवं तकनीकि शिक्षा सिर्फ अमीर घरों के बच्चों तक सीमित नहीं रहेगी। हर आयवर्ग के लोग इसका खर्च वहन कर सकेंगे। चूकि युवा वर्ग के लोग काम करते हुए इसे ग्रहण करेंगे, अतः मां बाप पर किसी तरह का वित्तीय बोझ भी नहीं पड़ेगा। विशेषज्ञों का मानना है कि आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस आधारित शिक्षा ही औद्योगिक क्रांति के अगले चरण के लिए योग्य अभ्यार्थी तैयार करेगी। इसके कारण रोजगार का दायरा बढ़ेगा। भारत जैसे विशाल देश जहां स्वरोजगार पर अधिक ध्यान केद्रित करने की आवश्यकता है, यह विशेष उपयोगी साबित हो सकता है। हर हाथ को काम मिले इसके लिए निरंतर चलने वाली योजनाओं के बारे में संजीदगी से कार्य करने की जरुरत है। कोई भी काम छोटा या बड़ा नहीं होता, सैद्धांतिक रुप से हम सभी ऐसा ही मानते हैं। लेकिन व्यावहारिक जीवन में झाड़ू लगाने वाले व्यक्ति को हीन समझा जाता है। उसे बराबरी का दर्जा नहीं देते। कार्य को लेकर बराबरी का दृष्टिकोण हमें व्यावहारिकता में लाना होगा। रोजगार की संभावनाओं में वृद्धि के लिए यह कदम निश्चित ही भविष्य में सुखद परिणाम का आधार बनेगा।

वर्तमान में ज्यादातर बच्चे विदेश जाकर पढ़ने और वहां रोजगार पाने के लिए लालायित हैं। विदेशों में जाकर पढ़ने वालों की संख्या में निरंतर वृद्धि इस बात का द्योतक है कि हमने शिक्षा तथा जीवन की गुणवत्ता पर आजादी के बाद के 75 वर्षों में कोई विशेष ध्यान नहीं दिया है। इसका परिणाम हमारे समक्ष है कि भारत का भविष्य आज विदेशों के लिए काम कर रहा है और विभिन्न देशों की जी डी पी बढ़ाने में अपना योगदान दे रहा है। हमारे देश की प्रतिभा अपने देश के लिए ही समर्पित भाव से काम करे इसके लिए शिक्षा और जीवन की गुणवत्ता पर अधिक ध्यान देने की आवश्यकता है। इसके लिए नूतन कार्यक्रमों की शुरुआत करनी होगी, विदेशों की खूबियों को स्वदेश में स्थापित करना होगा, मेहनत करके खाने वालों को रोजमर्रा के जीवन में महत्ता देनी हेगी, शिक्षा के विकास के साथ रोजगार के नए दरवाजे खोलने होंगे तथा उच्च शैक्षणिक संस्थानों को बेहतर बनाने की दिशा में काम करना होगा। बेहतर विद्यालय, बेहतर शिक्षक और बेहतर वातावरण का निर्माण करना ही होगा ताकि भारत को अग्रिम पंक्ति में स्थान मिले तथा विश्व गुरु बनने का सपना साकार हो सके।

भारत में पश्चिमी देशों की तुलना में अभी भी आजीवन उच्च शिक्षा के जरिए रोजगार का दायरा सीमित है लेकिन चीन और जापान जैसे एशियाई देशों में इसका प्रचलन बढ़ रहा है। वैश्वीकरण के इस दौर में भारत में भी आने वाले वर्षों में इसका प्रचलन बढ़ेगा और भारत को विश्वशक्ति के रुप में स्थापित करने में इसका अहम योगदान होगा इसमें कोई संदेह नहीं है।

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 7

असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं के अधिकार

— राकेश कुमार सिंह

भारत में 397 मिलियन कर्मकारों में 123.9 मिलियन कर्मकार महिलाएं हैं, जिनमें से 106 मिलियन महिला कर्मकार, गांवों व देहातों में काम करती हैं तथा शेष 18 मिलियन महिलाएं शहरी क्षेत्रों में कर्मकार हैं। महिलाओं के स्वअर्जित रोजगार के राष्ट्रीय आयोग के एक आंकड़े के अनुसार 94 प्रतिशत महिलाएं असंगठित सेक्टर में कार्य करती हैं। गांवों एवं देहातों में 87 प्रतिशत महिलाएं खेतों में मज़दूरी या कटाई का कार्य करती हैं। ऐसी महिलाओं से न्यून्तम मज़दूरी पर अनेकों कार्य कराये जाते हैं।

भारत में लगभग 92 प्रतिशत कार्यस्थल असंगठित सेक्टर के अंतर्गत आते हैं। असंगठित सेक्टर से तात्पर्य व्यष्टियों या स्वनियोजित कर्मकारों के स्वामित्वाधीन अथवा किसी प्रकार के माल के उत्पादन, विक्रय या सेवा प्रदान करने में लगे हुए उद्यम से है। यहां नियोजित कर्मकारों की संख्या दस से कम होती है। असंगठित कर्मकार से तात्पर्य ऐसे कर्मकार से है, जो घरों में, स्वनियोजित रोजग़ार में अथवा दैनिक मज़दूरी वाले असंगठित क्षेत्र के कर्मकार हैं। इसमें ऐसे संगठित सेक्टरों के कर्मकार भी शामिल होते हैं, जिन्हें रोजग़ार सुरक्षा, कार्य सुरक्षा एवं सामाजिक सुरक्षा प्राप्त नहीं है।

मानव सभ्यता के प्रारम्भ से ही महिलाओं के साथ दोयम दर्जे का व्यवहार किया जाने लगा। उसे व्यापार की वस्तु की तरह समझा गया। भारतीय समाज में देह–व्यापार, गुलामी एवं वेश्यावृति बड़े पैमाने पर प्रचलन में रही है। पर्दा–प्रथा, दहेज प्रथा, कामकाजी स्त्री के प्रति दुर्भावना और कम उम्र में विवाह के कारण उसकी स्थिति अत्यन्त दयनीय थी।

महिला कर्मकारों की कठिनाइयां अनेक प्रकार की हैं, जैसे वेतन–मजदूरी में असमानता, दैहिक शोषण, अस्वस्थ्य वातावरण में काम करने को विवश होना, कार्यों में व वेतन में भेदभाव करना। इन सबके अलावा वर्तमान में एक नई प्रकार के दोहन पर भी बहस हो रही है, जिसे 'सरोगेटेड मदर' के नाम से जाना जाता है। साथ ही सरोगेटेड कर्मकार महिलाओं के अधिकारों की बात भी की जा रही है लेकिन अभी तक इस पर कोई सार्थक प्रयास नहीं किया जा सका है।

औद्योगिकीकरण एवं वैश्विकरण के आधुनिक युग में महिलाओं में अनेक क्रान्तिकारी परिवर्तन हुए भी हैं। सामाजिक परिवर्तन एवं आर्थिक उदारीकरण के कारण कामकाजी महिलाओं की तादाद में लगातार वृद्धि हुई है। उपर्युक्त के परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत लेख में महिला कर्मकारों को प्राप्त संवैधानिक अधिकार, विभिन्न प्रकार के विधिक अधिकार एवं उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित निर्णयों एवं दिशा–निर्देशों की संक्षिप्त विवेचना करने का प्रयास किया गया है।

भारतीय संविधान में महिला कर्मकारों की स्थिति

संविधान निर्माताओं ने भारतीय संविधान में महिलाओं की सामाजिक स्थिति में सुधार हेतु अनेकों प्रावधान किए हैं, जिसमें से निम्नलिखित प्रमुख हैं:

उद्देशिका :

भारतीय संविधान की उद्देशिका में ही सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक न्याय, विचार अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता एवं अखंडता सुनिश्चित करने वाली बंधुता को बढ़ाने की बात की गई है।

निम्नलिखित प्रावधानों से स्पष्ट होता है कि महिलाओं की गरिमा एवं उनकी सुरक्षा की बात भारतीय संविधान की उद्देशिका में ही उल्लिखित है :

अनुच्छेद 15 (1)

राज्य, किसी नागारिक के विरूद्ध धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा।

अनुच्छेद 15 (2)

कोई नागरिक केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान या इनमें से किसी के आधार पर (क) दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों और सार्वजनिक मनोरंजन के स्थानों में प्रवेश, या (ख) राज्य निधि से पोषित या साधारण जनता के प्रयोग के लिए समर्पित कुओं, तालाबों, स्नानघाटों, सड़कों और सार्वजनिक समागम के स्थानों के उपयोग, के संबंध में किसी भी निर्योग्यता, दायित्व, निर्बंधन या शर्त के अधीन नहीं होगा।

अनुच्छेद 15 (3)

यह अनुच्छेद महिलाओं के लिए वरदान के समान है। इसके अर्न्तगत राज्य को यह अधिकार दिया गया है कि वह महिलाओं एवं बच्चों के लिए कोई भी विशिष्ट कानून बना सकता है जो भले ही स्त्री एवं पुरूषों के बीच विभेदकारी हो।

अनुच्छेद 16

यह अनुच्छेद लोक नियोजन के विषय में सभी नागरिकों को अवसर की समता का अधिकार देता है, अर्थात् सरकारी नौकरियों में पुरूषों के साथ–साथ स्त्रियों को भी समान अधिकार होगा।

अनुच्छेद 21

इस अनुच्छेद के अनुसार, किसी व्यक्ति को उसके प्राण या दैहिक स्वतंत्रता से विधि द्वारा स्थापित

प्रक्रिया के अनुसार ही वंचित किया जाएगा, अन्यथा नहीं।

यह अनुच्छेद प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता जिसमें कि स्त्रियों की गारिमामय जीवन दशा भी शामिल है, का प्रावधान करता है।

अनुच्छेद 23 (1)

मानव का दुर्व्यापार और बेगार तथा इसी प्रकार का अन्य बलात्–श्रम निषेध किया जाता है और इस उपबंध का कोई भी उल्लंघन अपराध होगा जो विधि के अनुसार दंडनीय होगा।

अनुच्छेद 24

चौदह वर्ष से कम आयु के किसी बालक/बालिका को किसी कारखाने या खान में काम करने के लिए नियोजित नहीं किया जाएगा या किसी अन्य परिसंकटमय नियोजन में नहीं लगाया जाएगा।

अनुच्छेद 39 (क)

पुरूष हों या स्त्री, सभी नागरिकों को समान रूप से जीविका के पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार है।

अनुच्छेद 39 (घ)

पुरूषों एवं स्त्रियों दोनों को हीं समान कार्य के लिए समान वेतन प्राप्त हो।

अनुच्छेद 39 (ङ)

पुरूष या महिला कर्मकारों के स्वास्थ्य और शक्ति का तथा बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरूपयोग न हो और आर्थिक आवश्यकता से विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगार में न जाना पड़े, जो उनकी आयु या शक्ति के अनुरूप न हो।

अनुच्छेद 43

कर्मकारों के लिए निर्वाह मज़दूरी आदि : राज्य उपयुक्त विधान या आर्थिक संगठन द्वारा या किसी अन्य रीति से कृषि के, उद्योग के या अन्य प्रकार के सभी कर्मकारों को काम, निर्वाह मज़दूरी, शिष्ट जीवनस्तर और अवकाश का संपूर्ण उपभोग सुनिश्चित करने वाली काम की दशाएं तथा समाजिक और सांस्कृतिक अवसर प्राप्त कराने का प्रयास करेगा और विशिष्टतया ग्रामों में कुटीर उद्योगों को वैयक्तिक या सहकारी आधार पर बढ़ाने का प्रयास करेगा।

अनुच्छेद 43 – क

उद्योगों के प्रबंध में कर्मकारों का भाग लेनाः राज्य किसी उद्योग में लगे हुए उपक्रमों, स्थापनाओं या अन्य संगठनों के प्रबंध में कर्मकारों का भाग लेना सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त विधान द्वारा या किसी अन्य रीति से कदम उठाएगा।

अनुच्छेद 45

यह अनुच्छेद राज्यों पर यह कर्त्तव्य डालता है कि वह संविधान के पारित होने के 10 वर्षों तक 14 वर्ष से कम आयु के बालक/बालिकाओं के लिए निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था की जाय।

अनुच्छेद 46

यह अनुच्छेद राज्यों पर यह कर्त्तव्य डालता है कि राज्य, जनता के दुर्बल वर्गों, विशिष्टतया अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के शिक्षा और आर्थिक हितों संबंधी विशेष सावधानी में अभिवृद्धि करेगा और सामाजिक अन्याय तथा सभी प्रकार के शोषण से उनकी सुरक्षा करेगा।

अनुच्छेद 47

यह अनुच्छेद राज्यों पर यह कर्त्तव्य डालता है कि राज्य, नागरिकों के पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊंचा करने तथा लोक स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्त्तव्यों में मानेगा। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भारत में ज़्यादातर स्त्रियों की मृत्यु खराब पोषाहार की वजह से होती है।

अनुच्छेद 51 क

"भारत के सभी लोगों में समरसता और समान मातृत्व की भावना का निर्माण करें जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करें जो स्त्रियों के सम्मान के विरूद्ध हो।"

उपर्युक्त के आधार पर यह कहा जा सकता है कि भारतीय संविधान में महिला एवं महिला कर्मकारों की सामजिक, आर्थिक एवं शारीरिक विकास की दिशा में अनेकानेक प्रावधान बनाये गए हैं। इस संबंध में संविधान की उद्देशिका से लेकर मौलिक अधिकार एवं राज्य के नीति के निदेशक तत्वों में इसका उल्लेख किया गया है। उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए समय–समय पर संसद ने अनेक विधेयकों को पारित किया है। कुछ महत्वपूर्ण विधेयकों का उल्लेख निम्नवत है:

महिला कर्मकारों को प्राप्त विधिक संरक्षण

कारखाना अधिनियम, 1948 के अन्तर्गत

यह कामकाजी महिलाओं के लिए बहुत महत्वपूर्ण अधिनियम है जिसमें महिला कर्मकारों के लिए काम के घंटे, उनकी सुरक्षा, काम से छुट्टी, अत्यधिक काम इत्यादि के सम्बन्ध में प्रावधान बनाये गए हैं। इसी अधिनियम में यह बाध्यकारी बनाया गया है कि प्रत्येक कारखानों में महिलाओं हेतु अलग से जन सुविधाएं बनाई जानी चाहिए। ऐसी सभी जन सुविधाएं पूरी तरह से सुरक्षित होनी चाहिए। साथ ही साथ महिलाओं की प्राईवेसी का पूरा ख्याल रखा जाना चाहिए। समय–समय पर इसकी सफाई सुनिश्चित की जानी चाहिए।

किसी भी कामकाजी महिला को खतरनाक पेशों में संलग्न नहीं किया जाएगा। इसके अन्तर्गत ऐसे सभी व्यवसाय आते हैं, जिसमें शारीरिक जख्म, जहरीले एवं खतरनाक रोग इत्यादि की संभावना हो।

कारखाना अधिनियम में कामकाजी स्त्रियों को अलग से नहाने एवं कपड़े धोने की व्यवस्था का अधिकार है।

शिशुगृह की व्यवस्थाः कामकाजी महिलाओं के शिशुओं के देखभाल के लिए कारखाने में ही अलग से व्यवस्था होनी चाहिए। इस अधिनियम की धारा 48 के अन्तर्गत जिस भी कारखाने में 30 से ज्यादा कामकाजी महिलाएं हों, वहां पर ऐसी स्त्रियों के 6 वर्ष से कम आयु के बच्चों को रखने की उचित व्यवस्था होनी चाहिए। ऐसे कमरों में उचित रौशनी एवं वायु आने–जाने की व्यवस्था होनी चाहिए। साथ ही, कमरे पूरी तरह से साफ–सुथरे होने चाहिए।

इसी अधिनियम में कामकाजी महिलाओं के लिए काम के 9 घंटे निर्धारित किए गए हैं। साथ ही महिलाओं के लिए प्रत्येक सप्ताह 48 घण्टे निर्धारित किए गए हैं।

इसी अधिनियम में कामकाजी महिलाओं के लिए अधिकतम लोड 55 पाउण्ड (एलबीएस) निर्धारित किया गया है।

इसी अधिनियम में स्त्रियों के लिए रात्रि ड्यूटी को प्रतिबंधित किया गया है। इसकी धारा 66 (1)(बी) के अनुसार किसी भी स्त्री को कारखाने में सायं 7 बजे के बाद एवं सुबह 6 बजे से पहले नियोजित नहीं किया जाएगा।

उल्लेखनीय है कि उपर्युक्त तरह के ही मिलते–जुलते प्रावधान माइन्स अधिनियम, 1952, प्लान्टेशन लेबर अधिनियम 1951, बीड़ी एवं सिगार कर्मकामर (रोजगार की सेवाशर्तें) अधिनियम 1966 एवं संविदा श्रम (रेगुलेशन एवं ऐबोलिशन) अधिनियम 1970 में भी बनाये गए हैं।

महिलाओं के लिए विशेष अधिनियम

मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961

यह अधिनियम महिला कर्मकारों को बच्चे पैदा होने से पहले व बाद में मातृत्व के लाभ के लिए बनाया गया है। इस अधिनियम को 2016 में संशोधित किया गया। संशोधित अधिनियम (मातृत्व लाभ (संशोधन) अधिनियम 2016) के अनुसार मातृत्व के दौरान छुट्टी 12 सप्ताह से बढ़ाकर 26 सप्ताह कर दिया गया है। पैतृत्व लाभ की छुट्टी भी 6 सप्ताह से बढ़ाकर 8 सप्ताह कर दिया गया है। यदि महिला के दो या दो से अधिक बच्चे हैं, तो उसे 12 सप्ताह का मातृत्व लाभ दिया जाएगा, यद्यपि ऐसे मामले में पैतृत्व लाभ 6 सप्ताह ही रहेगा। इस अधिनियम के अन्तर्गत यह भी व्यवस्था है कि मातृत्व लाभ के दौरान महिलाओं के वेतन या मजदूरी से किसी भी प्रकार की कोई कटौती नहीं की जाएगी।

ऐसे प्रत्येक उपक्रम या कारखाने में, जहां 50 से ज्यादा कर्मकार कार्य करते हैं, वहां पर शिशुगृह (creche) का होना अनिवार्य है और महिला कर्मकार को कार्य के दौरान न्यूनतम चार बार शिशुगृह जाने की अनुमति होनी चाहिए। उपक्रम या कारखाने के मालिक के ऊपर इस अधिनियम ने यह दायित्व सौंपा है कि वह महिला कर्मकार की नियुक्ति के समय उसको उसके अधिकारों के बारे में अवगत कराये। यह सूचना लिखित या डिजिटल फार्म में होनी चाहिए।

बी.शाह बनाम लेबर कोर्ट, कोयम्बटूर, (ए.आई.आर 1978 एस.सी.12) के वाद में अभिमत किया गया है कि मातृत्व अधिनियम की धारा 5 सब–धारा 1 और 3 के प्रयोजनों में प्रयुक्त शब्द सप्ताह के अन्तर्गत 7 दिन जिसमें रविवार को गिनते हुये, माना जाना चाहिए। म्युनिसिपल कारपोरेशन ऑफ दिल्ली बनाम फिमेल वर्कर, (ए.आई.आर 2000 एस.सी.1275) के वाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्धारित किया कि मातृत्व अधिनियम का लाभ आकस्मिक कर्मकार एवं दैनिक भोगी महिला कर्मकार पर भी लागू होता है।

कर्मकार बीमा अधिनियम, 1948

इस अधिनियम के अन्तर्गत महिला कर्मकार को बीमारी के दौरान, मातृत्व के दौरान एवं कार्य के दौरान लगे चोटों के लिए नकद भुगतान की व्यवस्था करता है।

कर्मकार भविष्य निधि एवं विविध प्रावधान अधिनियम, 1952

यह अधिनियम एक लोक कल्याणकारी अधिनियम है। इस अधिनियम के अन्तर्गत महिला कर्मकार को सामाजिक सुरक्षा उस समय प्रदान करने की व्यवस्था की गई है जब उसका परिवार विपत्ति में होता है और दिन–प्रतिदिन की आवश्यकता को पूरा करने में असमर्थ होता है। ऐसे मामले ज़्यादातर उस समय होते है जब कर्मकार की मृत्यु हो जाती है या कार्य के दौरान हादसे में वह कार्य करने में पूर्णरूप से असमर्थ हो जाता है।

पेमेन्ट ऑफ ग्रेच्यूटी एक्ट–1972

यह अधिनियम कर्मकारों को लम्बी सेवा में रहते हुए सेवानिवृति के बाद के सम्बन्ध में प्रावधान करता है। यद्यपि यह अधिनियम ज़्यादातर संगठित सेक्टरों में या सरकारी संस्थानों में ही लागू होता है।

कर्मकार प्रतिपूर्ति अधिनियम, 1923

यह अधिनियम ऐसे समय कर्मकारों की मदद करता है, जब कार्यस्थल के दौरान किसी कर्मकार के साथ दुर्घटना या उसकी मुत्यु हो जाती है। ऐसी स्थिति में कर्मकार के परिवार को गंभीर अपूर्णीय क्षति होती है। यह अधिनियम सभी प्रकार के सरकारी एवं गैर–सरकारी संस्थानों के ऊपर लागू होता है। कर्मकार प्रतिपूर्ति (संशोधन) अधिनियम 2000 के लागू होने के बाद अब सभी प्रकार के कर्मकार चाहे वे आकस्मिक कर्मकार हों या दैनिक भोगी कर्मकार इस अधिनियम की परिधि में शामिल

किए गए हैं।

न्यूनतम मज़दूरी अधिनियम, 1948

इस अधिनियम के अन्तर्गत विशेषतः महिला कर्मकारों के लिए न्यूनतम मज़दूरी का प्रावधान किया गया है। गौरतलब है कि पुरूष कर्मकारों की तुलना में महिला कर्मकार को न्यूनतम दर से मज़दूरी दी जाती थी।

वेतन भुगतान अधिनियम, 1936

यह अधिनियम कर्मकारों के वेतन भुगतान के सम्बन्ध में अनेकों प्रावधान बनाता है। यह अधिनियम भी लगभग सभी प्रकार के उपक्रमों, संस्थानों एवं कारखानों पर लागू होता है। यद्यपि यह अधिनियम असंगठित सेक्टरों में काम करने वाले कर्मकारों पर लागू नहीं होता है।

समान पारिश्रमिक अधिनियम, 1976

भारतीय संविधान के भाग चार के अनुच्छेद 39 के अन्तर्गत स्त्री व पुरूष दोनों को समान वेतन दिया जाएगा। गौरतलब है कि पुरूष कर्मकारों की तुलना में महिला कर्मकार को अतिन्यूनतम दर से मज़दूरी दी जाती थी। यद्यपि यथार्थ यह है कि आज भी स्त्री की तुलना में पुरूष कर्मकार को ज्यादा मज़दूरी दी जाती है। कुछ मामलों में तो महिला कर्मकारों ने कम मज़दूरी दिए जाने को उच्चतम न्यायलय में चुनौती दी। एयर इण्डिया बनाम नरगिस मिर्जा (ए.आई.आर 1981 एस.सी.1929) के वाद में जिसमें केन्द्र सरकार ने नोटिफिकेशन जारी करके कहा कि एयर इण्डिया में स्त्री एवं पुरूषों के बीच मज़दूरी में असमानता लिंग के आधार पर नहीं है। इसी वाद में महिला कर्मकारों के सेवा में भी लिंग के आधार पर भेदभाव किया गया था। समान पारिश्रमिक (संशोधन) अधिनियम, 1987 द्वारा महिला कर्मकार एवं पुरूष कर्मकारों के मज़दूरी के भेदभाव को समाप्त कर दिया गया।

असंगठित कर्मकार सामाजिक सुरक्षा अधिनियम, 2008

यह अधिनियम, 16 मई, 2009 को प्रवर्तन में आया। इस अधिनियम की मुख्य विशेषताएं निम्न हैः

1. केन्द्रीय सरकार समय–समय पर असंगठित कर्मकारों के लिए निम्नलिखित विषयों के सम्बन्ध में कल्याणकारी योजनाएं विचरित और अधिसूचित करेगीः
   (अ) जीवन और निःशक्ता सुरक्षा,
   (ब) स्वास्थ्य और प्रसूति लाभ,
   (स) वृद्धावस्था संरक्षण और
   (द) अन्य कोई लाभ जो केन्द्रीय सरकार द्वारा अवधारित किया जाए। (धारा) 3 (1))
2. राज्य सरकारें समय–समय पर असंगठित कर्मकारों के लिए निम्नलिखित विषयों के सम्बन्ध में कल्याणकारी योजनाएं विचरित और अधिसूचित करेंगी :

(अ) भविष्य निधि
(ब) नियोजन क्षति फायदा
(स) आवासन
(द) बालकों के लिए शिक्षा संबंधी योजनाएं
(च) कर्मकारों के कौशल का उन्नयन
(छ) अंत्येष्टि सहायता और
(ज) वृद्धाश्रम (धारा 3 (1) (4))

3. केन्द्रीय सरकार द्वारा अधिसूचित प्रत्येक योजना केन्द्रीय सरकार द्वारा पूर्णतः वित्तपोषित किया जाएगा। (धारा 4 (1))
4. केन्द्रीय सरकार द्वारा राष्ट्रीय सामाजिक सुरक्षा बोर्ड नामक एक राष्ट्रीय बोर्ड का गठन किया जाएगा जो उक्त अधिनियम में वर्णित विषयों के क्रियान्वयन सुनिश्चित करेगी। (धारा 5 (1))
5. प्रत्येक राज्य सरकार द्वारा राज्य सामाजिक सुरक्षा बोर्ड नामक एक राज्य बोर्ड का गठन किया जाएगा जो उक्त अधिनियम में वर्णित विषयों के क्रियान्वयन को सुनिश्चित करेगी। (धारा 6 (1))
6. प्रत्येक असंगठित कर्मकार का जो इस अधिनियम के अन्तर्गत कुछ शर्तें पूरा करते हों, पंजीकरण होगा। उसके बाद उसे एक पहचान पत्र जारी किया जाएगा जो एक स्मार्ट कार्ड होगा जिसपर एक विशिष्ट पहचान संख्या होगी जो वह अपने पास रखेगा और ऐसा कर्मकार समाजिक सुरक्षा का लाभ उठा सकेगा। (धारा 10)

सरोगेसीः महिलाओं का एक नया असंगठित सेक्टर

विज्ञान और औद्योगिक विकास के नए–नए तरीकों से व्यक्ति के जीवन में बच्चे पैदा करने की तकनीक की दिशा में भी अभूतपूर्व खोज हुए हैं लेकिन साथ ही नयी–नयी समस्याओं ने भी जन्म लेना शुरू कर दिया है। लिंग परीक्षण, डी.एन.ए. परीक्षण, फिंगरप्रिटिंग तकनीक ने विधिशास्त्र की नयी परिभाषा को जन्म दिया है। अनेकों सामाजिक एवं आर्थिक विवादास्पद मुद्दों को जन्म देने के बाद भी सरोगेसी दुनिया में पूरी तरह से प्रचलन में आ गया है। भारतीय समाज भी इससे अछूता नहीं है। इसके अर्न्तगत एक महिला के कोख को कुछ पैसे के एवज में खरीदा जाता है। दूसरे शब्दों में एक पति/पत्नी जो किन्ही कारणों से अपने गर्भ से बच्चा पैदा करने में असमर्थ होते हैं, किसी अन्य स्त्री से अपने जीन के माध्यम से उसके गर्भ में अपना बच्चा पैदा करवाने की संविदा करता/करती है। सरोगेसी दो प्रकार का हो सकता है :

एलट्रयूस्टिक सरोगेसी

इसके अन्तर्गत उपर्युक्त स्थिति में बिना किसी संविदा या करार के या बिना पैसों के एवज में एक महिला दूसरे के लिए अपना गर्भ देती है। ये ज्यादातर रक्त संबंधी और घनिष्ठता के आधार

पर होता है। इसके अन्तर्गत सरोगेट मदर बच्चे के जन्म लेने के बाद बच्चे पर अपनी मातृत्व के अधिकार को त्याग देती है और इसमें अस्पताल या बच्चे पैदा करने में हुए खर्चे की ही देनगी होती है।

व्यापारिक सरोगेसी

इसके अन्तर्गत उपर्युक्त की स्थिति में किसी संविदा के अन्तर्गत एक मोटी धनराशि के बदले एक स्त्री अपने कोख का सौदा करती है अर्थात अपने गर्भ में बच्चा रखने की भारी रकम वह पति/पत्नी से लेती है।

भारतीय समाज में जहां सदैव स्त्रियों को पर्दा में रहने की वकालत की जाती है ऐसे समाज में इस प्रकार के कार्य शुरू में अनैतिक माने जाते थे, लेकिन बदलते समाज में जब स्त्री/पुरूष की महत्वाकांक्षा में वृद्धि हुई है, मेडिकल कारणों से बच्चा पैदा करने में असमर्थता के कारण इस तरह का व्यापार अब अपनी चरम सीमा पर है। लेकिन उचित विधिक प्रावधान के अभाव में इस प्रकार की तकनीकि ने अनेकों समस्याओं को जन्म देना शुरू कर दिया है। कई–कई मामलों में तो एक स्त्री पैसे के लिए अपने गर्भ को कई बार बेचती है, जिससे उसके शरीर पर बुरा एवं गंभीर असर पड़ता है। पैसे के लेन–देन के विवाद में भी, कई बार गंभीर परिणाम समाज में देखने को मिल रहे हैं। विदेशों से आकर यहां सरोगेसी के अन्तर्गत बच्चा प्राप्त करने वाले दम्पतियों की संख्या में बेतहाशा वृद्धि हो रही है। आंकड़ों के अनुसार सरोगेसी का व्यापार कई करोड़ गुना पहुंच गया है।

सरोगेसी के विधिक पहलुओं के अन्तर्गत इसमें ज़्यादा आलोचना इस बात की की जाती है कि इसके अन्तर्गत स्त्री की गरिमा और उसकी प्राइवेसी का उल्लंघन होता है और स्त्री को व्यापार की वस्तु ही नहीं बना देता है, अपितु उसे दैहिक शोषण, गुलामी और वेश्यावृति की तरफ ले जाता है। इसके अन्तर्गत सरोगेट महिला के अधिकार जन्म देने वाले बच्चे के प्रति, बच्चे का अधिकार अपने सरोगेट मदर के प्रति एवं अपने होने वाले माता–पिता के प्रति, माता/पिता के अधिकार/कर्तव्य बच्चे के प्रति इत्यादि अनछुए पहलुओं को जन्म देता है।

इस सम्बन्ध में उल्लेखनीय है कि सरोगेसी बिल, 2016 में भारत में व्यापारिक सरोगेसी को पूर्णतः प्रतिबन्धित करने की बात की गई है साथ ही एलट्रयूस्टिक सरोगेसी को मेडिकल मामलों में अपनाने की बात की गई है। विदेशी दम्पति को, समलैंगिकता के मामलों में इसकी इजाजत नहीं दी गई है।

असंगठित सेक्टर में कामगार महिलाओं के प्रति न्यायिक दृष्टिकोण

उच्चतम एवं उच्च न्यायालयों ने भी समय–समय पर असंगठित सेक्टरों में कामगार महिलाओं के अधिकारों के संरक्षण के सम्बन्ध में सराहनीय प्रयास किया है। इसमें सर्वप्रथम बधुआ मुक्ति मोर्चा बनाम भारत सरकार, (ए.आई.आर 1984 एस.सी.802) के वाद में असंगठित क्षेत्रों में कार्य करने वाले

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 16

मजदूरों की मज़दूरी, मज़दूरों की पहचान एवं उसके पुर्नवास इत्यादि के सम्बन्ध में दिशा–निर्देश दिए गए हैं। नीरजा चौधरी बनाम मध्य प्रदेश राज्य (1988, लेब आईसी 1680 (एस.सी) के वाद में निर्णीत किया गया कि संविधान के अनुच्छेद 21 एवं 23 के अर्न्तगत बलात्श्रम में लगे मज़दूरों को तुरंत रिहाई एवं पुर्नवास के उचित प्रबन्धन का निर्देश शामिल है। पिपुल्स यूनियन फार डेमोक्रेटिक राइटस बनाम भारत सरकार (ए.आई.आर 1982 एस.सी.1473) के वाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्णीत किया कि अनुच्छेद 24 किसी व्यक्ति के विरूद्ध भी प्रवर्तन कराया जा सकता है और किसी को भी 14 वर्ष से कम आयु के बच्चे को खतरनाक उद्योगों में लगाने से प्रतिबंधित करता है। इसी तरह के मिलते–जुलते मत को उच्चतम न्यायालय ने सलाल हाइड्रो प्रोजेक्ट बनाम जम्मू एवं काश्मीर राज्य, (ए.आई.आर 1984 एस.सी.177) में भी व्यक्त किया है। एम.सी.मेहता बनाम तमिलनाडु राज्य, (1996, 9 स्कैल 45) के वाद में न्यायालय ने माचिस उद्योग में लगे बलात मज़दूरों के सम्बन्ध में दिशा–निर्देश दिए हैं।

विशाखा बनाम भारत सरकार (ए.आई.आर 1997 एस.सी. 2011) के वाद में स्त्रियों के कार्यस्थल पर उनके खिलाफ यौन–शोषण रोकने के लिए अनेकों दिशा–निर्देशा जारी किए एवं उन दिशा–निर्देशों के पालन को सुनिश्चित करने हेतु प्रत्येक कार्यस्थल पर एक विशाखा कमेटी बनाने का निर्देश जारी किया। एपारेल एक्सपोर्ट प्रोमोशन काउंसिल बनाम ए.के.चोपड़ा (ए.आई.आर 1999 एस.सी.625) के वाद में उच्चतम न्यायालय ने लिंग परीक्षण को यौन–शोषण का प्रकार बताया और उसके आधार पर कार्यस्थल में किए गए भेदभाव को असंवैधानिक घोषित किया। साथ ही कार्यस्थल पर स्त्रियों के लिए उचित वातावरण बनाने का निर्देश जारी किया। मेधा कोटवाल बनाम भारत सरकार (2013) 1 एस.सी.सी. 297 के वाद में उच्चतम न्यायलय ने विशाखा वाद में जारी किए गए अनेकों दिशा–निर्देशों के पालन को सुनिश्चित न करा पाने पर खेद प्रकट किया और केन्द्र व राज्य सरकारों को कड़ाई से पालन करने की हिदायत दी।

उच्चतम न्यायलय ने एयर इण्डिया बनाम नरगिस मिर्जा (ए.आई.आर 1981 एस.सी.1829, यूसुफ बनाम बम्बई राज्य (ए.आई.आर 1954 एस.सी.321), अंजली राय बनाम पश्चिम बंगाल राज्य (ए.आई. आर 1952 कलकत्ता 825) इत्यादि वादों में महिलाओं के प्रति भेदभाव किए जाने पर आपत्ति जताई और अनुच्छेद 15 (1) के अन्तर्गत लिंग के आधार पर भेदभाव को असंवैधानिक करार दिया। साथ ही ऐसी विधियों को जो अनुच्छेद 15 (3) के अन्तर्गत बनायी गई हैं, सकारात्मक भेदभाव करने पर भी वैध घोषित किया।

दत्तात्रेय मोरेश्वर पंगारकर बनाम बम्बई राज्य, (ए.आई.आर 1952 एस.सी.181) के वाद में उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद 42 के अनुपालन में बनाये गए मातृत्व लाभ अधिनियम में दिए गए लाभ को अनुच्छेद 15 के अन्तर्गत लिंग के आधार पर भेदभाव मानने से इंकार कर दिया और इसे मौलिक अधिकार का उल्लंघन नहीं माना। दिल्ली म्युनिसिपल कारपोरेशन बनाम महिला कर्मकार (2000) 3

एस.सी.सी. स्कैल 224 के वाद में मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 के अन्तर्गत के क्षेत्राधिकार को बढ़ाते हुए इसके अन्तर्गत दैनिक मज़दूरी करने वाली महिला कर्मकार को इसके लाभ को देने का निर्देश दिया। बैंक ऑफिसर एसोसिएशन बनाम स्टेट बैंक ऑफ इण्डिया, (1998) 1 एस.सी.सी. स्कैल 428 के वाद में उच्चतम न्यायलय ने निर्णीत किया कि महिला कर्मकार अपने पुरूष सहयोगी से किसी भी प्रकार से कम नहीं होती है। अतः लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं किया जा सकता है। एअर इण्डिया केबिन क्रू एसोसिएशन बनाम एसएसवनी मरचेन्ट और अन्य (2003, 6 एस.सी.सी. स्कैल 277) के वाद में कहा गया कि संविधान का अनुच्छेद 15 एवं 16 स्त्री–पुरूष के बीच भेदभाव–पूर्ण आचरण को प्रतिबंधित करता है लेकिन स्त्रियों को वरीयता या विशेष व्यवहार से छूट देने की स्वतंत्रता देता है।

उच्चतम न्यायालय ने अपने कई वादों यथा पिपुल्स यूनियन फॉर डेमोक्रेटिक राइटस बनाम भारत सरकार, (ए.आई.आर 1982 एस.सी.1473), रनबीर सिंह बनाम भारत सरकार, (ए.आई.आर 1982 एस. सी.879) तथा भगवान दास बनाम स्टेट आफ हरियाणा, (ए.आई.आर 1987 एस.सी. 2049) में स्त्री और पुरूषों के बीच समान मजूदरी की वकालत की है और निर्णीत किया है कि समान कार्य के लिए समान वेतन भारतीय संविधान के अनुच्छेद 14 व 16 के अन्तर्गत आता है।

उच्चतम न्यायालय ने अपने कई वादों के माध्यम से यह भी स्पष्ट किया है कि कर्मकारों के विशेषतः महिला कर्मकारों की स्वास्थ्य एवं सेहत भारतीय संविधान में प्रदत्त 'जीने के अधिकार' के मौलिक अधिकार के अन्तर्गत आता है। स्वास्थय सेवाएं सामाजिक सुरक्षा के अन्तर्गत आती हैं और इन्हें हर कीमत पर यह महिला कर्मकारों को प्रदान किया जाना चाहिए। कलकत्ता इलेक्ट्रिक सप्लाई कारपोरेशन बनाम सुभाष चंद्र बोस (ए.आई.आर 1992 एस.सी. 573) तथा उपभोक्ता शैक्षणिक रिसर्च सेंटर बनाम भारत सरकार (ए.आई.आर 1995 एस.सी. 922) के वाद में उच्चतम न्यायालय ने स्पष्ट रूप से कहा है कि जीने के अधिकार के अन्तर्गत भारतीय संविधान के अनुच्छेद 21 के साथ अनुच्छेद 39(ई), 41, 43, 48–ए को पढ़ने पर ज्ञात होता है कि आजीविका का अधिकार भी इसमें शामिल है और इससे किसी भी कर्मकार को वंचित नहीं किया जा सकता है।

उच्चतम न्यायालय ने महिला कर्मकारों को भी अनेकों वादों के माध्यम से मातृत्व लाभ अधिनियम, 1961 के अन्तर्गत लाभों को ज्यादा से ज़्यादा महिला कर्मकारों को देने के लिए इसके प्रावधानों के निर्वचन को अत्यन्त उदार बना दिया है, जैसे 7 दिनों के अन्तर्गत रविवार को भी शामिल माना जाना। बी.शाह बनाम लेबर कोर्ट, कोयम्बटूर (ए.आई.आर 1978 एस.सी. 12) 160 दिनों के मातृत्व लाभ के अन्तर्गत आधे दिन को भी शामिल करने की मंशा जाहिर करता है।

निष्कर्ष

उपर्युक्त प्रावधानों की विवेचना से स्पष्ट है कि यद्यपि महिलाएं पुरूष कामगारों की तुलना में ज्यादा घंटे कार्य करती हैं बावजूद इसके असंगठित सेक्टरों में कामगार महिलाओं की स्थिति काफ़ी

दयनीय है। उनकी सामजिक, आर्थिक एवं शैक्षणिक स्थिति में गिरावट के कारण यह स्थिति काफ़ी भयावह हो जाती है। लेकिन संतोष की बात है कि भारतीय विधिक व्यवस्था ने असंगठित सेक्टरों में कामगार महिलाओं के प्रति समय–समय पर कठोर कदम उठाए हैं। केन्द्र सरकार द्वारा लाया गया असंगठित कर्मकार सामाजिक सुरक्षा अधिनियम 2008 इस दिशा में एक सराहनीय कदम है। स्पष्ट है कि यह अधिनियम असंगठित क्षेत्रों में कामगार महिलाओं की हर जरूरतों को पूरा करता है। यह अपने आप में एक पूर्ण अधिनियम है और यदि इसे पूरी ईमानदारी के साथ लागू किया जाता है तो असंगठित क्षेत्र में कार्य कर रही महिला कर्मकारों की सामाजिक, आर्थिक व शारीरिक स्थिति में सुदृढ़ता आएगी। अधिनियम ने केन्द्र व राज्यों पर यह जिम्मेदारी डाली है कि समय–समय पर विशिष्ट योजनाएं चलाकर असंगठित क्षेत्रों में कार्य कर रही महिलाओं को लाभान्वित किया जाए। इसके अन्तर्गत अब तक अटल पेंशन योजना, उज्जवल योजना जैसी कई योजनाएं संचालित की जा रही हैं।

उच्चतम न्यायलय ने भी महिलाओं की सामाजिक, आर्थिक व उनके शारीरिक स्थिति के प्रति गंभीर दिशा–निर्देश जारी किए हैं। न्यायालयों द्वारा श्रम कानूनों का निर्वचन सदैव महिला कर्मकारों के हित में किया गया और प्रावधानों का उदार निर्वचन कर, महिला कर्मकारों की सामाजिक स्थिति सुधारने का प्रयत्न किया गया। विशाखा या अन्य वादों के दिशा–निर्देशों का यदि कड़ाई से पालन सुनिश्चित कराया जाए तो काफी हद तक स्थिति में बदलाव आ सकता है।

यह सही है कि सिर्फ अधिनियम या प्रावधान बनाकर या न्यायालय के निर्णय द्वारा इस समस्या से निजात नहीं पाया जा सकता है। वास्तविकता तो यह है कि असंगठित सेक्टरों में कार्य करने वाली अधिकतर महिलाएं अपना भाग्य और किस्मत समझकर दिन–रात परिश्रम करती रहती हैं। ज़रूरत इस बात की है कि असंगठित सेक्टर में कार्य कर रही महिला कर्मकारों को उनके अधिकारों के बारे में नित्य प्रतिदिन अवगत कराया जाय और उन्हें उनके अधिकारों के प्रति सचेत किया जाए। समय–समय पर कारखानों या अन्य कार्यस्थलों पर कार्यशालाओं या अन्य गतिविधियों के माध्यम से यह सहजतापूर्वक कराया जा सकता है। इस सम्बन्ध में युवा पीढ़ी को एवं स्वयंसेवी संगठनों को आगे आकर, ऐसी महिलाओं को संभालने की जरूरत है।

○○○○○

शिक्षा वह नहीं है जो व्यक्ति सीखता है बल्कि वह क्या बनता है, वहीं शिक्षा है।

–स्वामी विवेकानन्द

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 19

गाँधी और हिंदी भाषा

– रमेश तिवारी

गाँधीजी ने भारत की स्वाधीनता और अभिव्यक्ति के माध्यम के रूप में हिन्दी भाषा पर लगातार काम किया। उल्लेखनीय है कि ऐसे अनेक प्रयासों के परिणामस्वरूप देश को अंग्रेज़ी हुकूमत से स्वाधीनता तो सन् 1947 में प्राप्त हो गई, किंतु भाषा के रूप में हिंदी को उसका अपेक्षित स्थान आज तक प्राप्त नहीं हो सका है। बीसवीं सदी के इतिहास में यह तथ्य उल्लेखनीय है कि दुनिया को सर्वाधिक प्रभावित करने वाले भारतीय महापुरूषों के बारे में जब भी अध्ययन–विश्लेषण किया जाएगा तो उसमें मोहनदास करमचंद गाँधी का नाम सर्वोपरि होगा। गाँधीजी बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे। उनके जीवन, लेखन और आचरण से देश का प्रत्येक व्यक्ति प्रभावित है। इस लेख में गाँधीजी और उनकी भाषा संबंधी मान्यताओं पर विचार–विमर्श प्रस्तुत किया गया है।

हमारा देश भारत बहुभाषी, बहुसांस्कृतिक और बहुजातीय देश है। यह विविधता ही भारत की विशेषता और पहचान है। हालाँकि, इसके कारण कभी–कभी चुनौतियाँ और समस्याएँ भी उत्पन्न होती हैं। इस देश की बहुभाषिकता से उत्पन्न समस्या के बारे में गाँधीजी के विचार बड़े स्पष्ट, व्यावहारिक और राष्ट्र–सापेक्ष हैं। देश की स्वतंत्रता के लिए गाँधीजी राष्ट्रीय एकता पर बल देते थे। राष्ट्रीय एकता के लिए उन्होंने एक ऐसी संपर्क भाषा की आवश्यकता समझी, जिसके अध्ययन से समूचे राष्ट्र को एक सूत्र में जोड़ा जा सके। यह सर्वविदित है कि गाँधीजी की मातृभाषा गुजराती थी। फिर भी जब–जब राष्ट्र को एकजुट करने के लिए किसी एक भारतीय भाषा का सवाल सामने आया तो गाँधीजी सदैव हिंदी के पक्ष में ही खड़े रहे। साथ ही जब–जब शिक्षा के माध्यम का सवाल आया, गाँधीजी सदा मातृभाषा को सर्वोपरि मानते रहे। सन् 1915 में, जब वे दक्षिण अफ्रीका से भारत लौटे तो उन्होंने पूरे देश की यात्रा की और यह पाया कि हिंदी ही एकमात्र भाषा है जो देश के अधिकतर भागों में बोली और समझी जाती है। वास्तव में, गाँधीजी ने दक्षिण अफ्रीका में ही हिंदी की शक्ति और महत्ता को पहचान लिया था। इसलिए उन्होंने 1906 में, इंडियन ओपिनियन नामक अपनी पत्रिका में, इस भाषा के महत्व पर चर्चा करते हुए इसे मीठी, नम्र और ओजस्वी भाषा कहा था। देश को स्वाधीनता के लिए प्रेरित करने के क्रम में गाँधीजी समस्त भारतवर्ष में भ्रमण करते और लोगों से जुड़ते थे। उत्तर से दक्षिण और पूरब से पश्चिम तक अपने भ्रमण के दौरान उन्होंने हिंदी की व्यापकता को गहराई से समझा था। भारत की स्वतंत्रता के लिए उन्होंने सिर्फ जन–जागरण अभियान ही नहीं चलाया, अपितु हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करने में भी अग्रणी भूमिका निभाई थी। भारत आने के बाद जब सन् 1917 में गाँधीजी ने अपनी पहली सत्याग्रह यात्रा चम्पारण

से आरंभ की तो इसी दौरान 3 जून को उन्होंने एक परिपत्र निकाला, जिसमें हिंदी की महत्ता के संदर्भ में लिखा था – ''हिंदी जल्दी से जल्दी अंग्रेजी का स्थान ले ले, यह ईश्वरी संकेत जान पड़ता है। हिंदी शिक्षित वर्गों के बीच संवाद माध्यम ही नहीं, बल्कि जनसाधारण के हृदय तक पहुंचने का द्वार बन सकती है। इस दिशा में कोई देसी भाषा इसकी समानता नहीं कर सकती। अंग्रेजी तो कदापि नहीं कर सकती।''

गाँधीजी की संवेदनशीलता बहुत गहरी और दृष्टि अत्यंत दूरदर्शी थी। वह जहाँ जाते, वहीं लोगों से बड़ी ही गर्मजोशी और गहराई से जुड़ते थे। उनसे संवाद कर उन्हें अपना बना लेते और उनके बन जाते थे। लोगों से जुड़ने का गाँधीजी का तरीका भी अनोखा था। विश्वास करना मुश्किल है कि लोगों से जुड़ने और उनके दुःख–दर्द को करीब से समझने के उद्देश्य से अपने जीवन की अधिकांश यात्राएँ गाँधीजी ने तीसरे दर्जे में की। इससे उन्हें भारत के जनसामान्य से संपर्क करने का पूरा अवसर मिला।

सन् 1918 में, महात्मा गाँधी ने इंदौर के हिंदी साहित्य सम्मेलन में कहा था – ''जैसे ब्रिटिश अंग्रेज़ी में बोलते हैं और सारे कामों में अंग्रेजी का ही प्रयोग करते हैं, वैसे ही मैं सभी से प्रार्थना करता हूँ कि हिंदी को राष्ट्रीय भाषा का सम्मान अदा करें।' इसे राष्ट्रीय भाषा बनाकर हमें अपने कर्तव्य को निभाना चाहिए।' हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रति गाँधीजी केवल कथनी के स्तर पर ही नहीं, बल्कि करनी के स्तर पर भी उतने ही समर्पित थे। इसी समय उन्होंने भारत के उन प्रांतों में पाँच 'हिंदी दूत' भेजे, जहाँ पर इस भाषा का ज्यादा प्रचलन नहीं था। इन पाँच दूतों में महात्मा गाँधी के सबसे छोटे बेटे देवदास गाँधी भी एक थे। ये पाँच हिंदी दूत हिंदी के प्रचार के लिए सबसे पहले तत्कालीन मद्रास स्टेट पहुँचे, जो आज का तमिलनाडु है। गाँधीजी दूर–द्रष्टा थे और स्पष्ट वक्ता भी। हिंदी भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने के पीछे उनकी स्पष्ट मान्यता थी, ''राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूंगा है।'' एक संपर्क भाषा के अभाव में किसी भी देश की राजनीतिक और सांस्कृतिक एकता न तो संभव है और न ही स्थायी हो सकती है। गाँधीजी ने राष्ट्रहित में बड़ी ही समझदारी और दूरदर्शिता दिखाते हुए भाषा के प्रश्न को स्वराज के प्रश्न से जोड़ दिया और सिर्फ जोड़ ही नहीं दिया, बल्कि आजीवन इस बात पर ज़ोर देते रहे कि हिंदुस्तान को सचमुच एक राष्ट्र बनाना है तो हिंदी ही आधिकारिक राष्ट्रभाषा हो सकती है। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद हमें उम्मीद थी कि हिंदी को राष्ट्रभाषा का गौरव प्रदान करने की दिशा में हम आगे बढ़ेंगे। किंतु तत्कालीन राजनीतिक नेतृत्व द्वारा हिंदी को राष्ट्रव्यापी स्तर पर स्वीकृति देने–दिलाने की दिशा में जब भी प्रयास किया जाता है, तब अनाश्यक रूप से कुछ छुटभैये राजनेता और अंग्रेजीदाँ समाज के प्रतिनिधि, हिंदी को अन्य भारतीय भाषाओं के लिए खतरा बताते हुए, हिंदी–विरोध का ढ़ोल पीटने लगते हैं। ऐसी किसी भी साज़िश को किसी भी दृष्टि से उचित और राष्ट्रहितकारी नहीं कहा जा सकता है।

हम देखते हैं कि सुदूर दक्षिण में जब हिंदी भाषा के प्रचार–प्रसार के लिए महात्मा गाँधी द्वारा

'दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा' की स्थापना की गई तो गाँधीजी ने अपने बेटे देवदास गाँधी को खुशी–खुशी हिंदी के प्रचार–प्रसार की ज़िम्मेदारी देकर दक्षिण भारत भेजा। भाषा, समाज, संस्कृति के लिए ऐसा समर्पण ही गाँधीजी को विराट व्यक्तित्व का स्वामी बना देता है। अकारण गाँधीजी नहीं कहते हैं कि मेरा जीवन ही मेरा संदेश है। गाँधीजी जो सोचते थे, वही कहते और करते थे। जीवन, लेखन और आचरण में व्याप्त यह साम्य ही गाँधीजी को महात्मा के रूप में हम सबके समक्ष स्थापित करता है।

गाँधीजी की मान्यता थी कि अगर स्वराज्य अंग्रेजी बोलने वाले भारतीयों का और उन्हीं के लिए होने वाला हो तो निःसंदेह अंग्रेजी ही राष्ट्रभाषा होगी। लेकिन अगर स्वराज्य करोड़ों भूखे मरने वालों, निरक्षर, दलितों और अन्त्यजों का है और उन सब के लिए होने वाला है तो हिंदी ही एकमात्र राष्ट्रभाषा हो सकती है। हिंदी का निर्माण राष्ट्र के अनुसार ही हुआ है और यह वर्षों से ही राष्ट्रभाषा की भाँति व्यवहृत हो चुकी है। ''अखिल भारत में परस्पर व्यवहार के लिए ऐसी भाषा की आवश्यकता है जिसे जनता का अधिकतम भाग पहले से ही जानता–समझता है और हिंदी इस दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ है।'' गाँधीजी के सपनों के भारत की जो तस्वीर थी, उसमें एक सपना राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी को प्रतिष्ठित करने का भी था। उनकी मान्यता थी कि राष्ट्रभाषा के बिना राष्ट्र गूँगाा हो जाता है। इसलिए राष्ट्रभाषा का सवाल हमारे राष्ट्र की अस्मिता का सवाल है। राष्ट्रभाषा के रूप में हिंदी को राष्ट्रीय पहचान दिलाने में, गाँधीजी का योगदान अनुपम और अनुकरणीय रहा है। यहाँ यह स्मरण रखना चाहिए कि, ''महात्मा गाँधी की मातृभाषा गुजराती थी और उन्हें अंग्रेजी भाषा का उच्चकोटि का ज्ञान था, किंतु सभी भारतीय भाषाओं के प्रति उनके मन में विशिष्ट सम्मान की भावना थी। प्रत्येक व्यक्ति अपनी मातृभाषा में शिक्षा प्राप्त करे, उसमें कार्य करे किंतु देश में सर्वाधिक बोली जाने वाली हिंदी भाषा भी वह सीखे, यह उनकी हार्दिक इच्छा थी।'' इस संदर्भ से यह पूरी तरह स्पष्ट है कि गाँधीजी सभी भारतीय भाषाओं को समान रूप से महत्व देते हुए राष्ट्रीय स्तर पर, जब राष्ट्रभाषा का प्रश्न आता था तो उसके लिए वे हिंदी भाषा को सर्वश्रेष्ठ मानते थे। गाँधीजी का मन–मस्तिष्क हिंदी को लेकर सदैव जागरूक रहता था। उनके लिए हिंदी एक भाषा या संप्रेषण का माध्यम मात्र न होकर राष्ट्रीयता का प्रतीक थी। उनकी मान्यता थी कि सबसे बड़ी समाज सेवा यह है कि हम सब अपनी देशी भाषाओं की तरफ मुडें और भारत की सभी भाषाओं का आदर करते हुए हिंदी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करें। आज हिंदी भाषा की राष्ट्रव्यापी स्वीकृति के सवाल पर अन्य भारतीय भाषाओं के ठेकेदारों को यह बात समझने की ज़रूरत है कि गाँधीजी ने हिंदी को राष्ट्रव्यापी स्वीकृति के साथ–साथ भारत की सभी देशी भाषाओं के आदर की बात भी कही थी। वे हिंदी के ज़रिए अन्य भारतीय भाषाओं को दबाना नहीं चाहते थे, बल्कि उनके साथ हिंदी को भी मिला देना चाहते थे। यदि उनकी इस बात को हम सही आशय और दिशा के साथ समझने में सफल हो गए, तो हिंदी का विरोध करने की मंशा ही नहीं रहेगी। गाँधीजी ऐसा किस आधार पर कह पा रहे थे?

इसे समझने के लिए हमें गाँधीजी की एक अन्य विशेषता को समझना होगा।

गाँधीजी की वह अन्य विशेषता यह थी कि किसी बात को सार्वजानिक जीवन में सामने रखने से पूर्व वे उसे अपने अनुभव और व्यवहार की कसौटी पर परखते थे। हिंदी को राष्ट्रभाषा क्यों बनाया जाए, राष्ट्रभाषा का स्वरूप क्या हो, राष्ट्रभाषा के गुण क्या हों आदि बिंदुओं पर उनका चिंतन–मनन निरंतर जारी रहता था। भारतीय स्वाधीनता आंदोलन के दौरान एक ऐसा कालखंड भी आया, जब तत्कालीन अंग्रेजी हुकूमत ने 'फूट डालो और राज करो' की नीति अपनाते हुए, हिन्दू–मुसलमानों के बीच भाषा आधारित वैमनस्य को बढ़ावा देने की कुटिल चाल चली। गाँधीजी ने ब्रिटिश हुकूमत की इस चाल को समय रहते समझते हुए, हिंदी के स्थान पर हिन्दुस्तानी शब्द का प्रयोग आरंभ कर दिया। ''हिंदी–उर्दू–हिन्दुस्तानी संबंधी लेख में गाँधीजी ने हरिजन सेवक (3 जुलाई 1937, 17 जुलाई 1937, 29 अक्टूबर 1938, 8 फरवरी 1942) के विभिन्न अंकों में हिंदी, उर्दू और हिन्दुस्तानी के विवाद पर अपनी लेखनी चलाई थी और वे बाद में इसी समस्या पर अपने विचार प्रस्तुत करते रहे।'' इस दौर में हिंदी–उर्दू विवाद को उभारने में अंग्रेजी हुकूमत की भी बड़ी भूमिका थी। उस समय एक वर्ग हिंदी का प्रबल समर्थक था और उसे श्रेष्ठ मानता था। जबकि दूसरा वर्ग उर्दू को श्रेष्ठ मानता था। इस विवाद से गाँधीजी काफ़ी आहत थे, क्योंकि उन्हें यह आशंका थी कि यह विवाद भारत के स्वतंत्रता–संग्राम में बाधक हो सकता है।''

वास्तव में, अपने इन विचारों के द्वारा गाँधीजी सबको यह बताना चाहते थे कि हिन्दुस्तानी की ताकत, उसकी जीवंतता, ग्रहणशीलता, आत्मीयता और संवाद में है। गाँधीजी हिन्दुस्तानी को हिन्दू–मुस्लिम एकता की एक मजबूत कड़ी भी मानते थे। उन्होंने दोनों वर्गों की गलतफ़हमी दूर करने के लिए कहा कि हिंदी, उर्दू और हिन्दुस्तानी शब्द उस एक ही ज़बान के सूचक हैं, जिसे उत्तर भारत में हिन्दू–मुसलमान बोलते हैं, जो देवनागरी या अरबी–फारसी लिपि में लिखी जाती है। इस बारे में उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि हिंदी देवनागरी लिपि में लिखी जाती है और उर्दू अरबी–फारसी लिपि में लिखी जाती है, किंतु इन दोनों भाषा–रूपों का मौखिक रूप हिन्दुस्तानी है, जिसे सभी वर्ग बोलते हैं। वे जानते थे कि हिन्दुस्तानी का सुझाव देने से दोनों वर्गों में अलगाव और अविश्वास की भावना दूर होगी, इसीलिए उन्होंने एक बात और कही कि असली प्रतिस्पर्धा तो हिंदी और उर्दू में नहीं, बल्कि हिन्दुस्तानी और अंग्रेजी में है। आजादी में है। आजादी के 75 वर्षों का यथार्थ यह है कि आज भी गाँधीजी का हिंदी को लेकर देखा गया सपना साकार होना बाकी है। भारतीय जनमानस के हित में हमें शासन, न्यायपालिका, चिकित्सा, सूचना–प्रौद्योगिकी, प्रबंधन के क्षेत्र में हिंदुस्तानी को और अधिक विस्तार देने की आवश्यकता है। इन प्रयासों के द्वारा ही हम गाँधीजी के सपनों का भारत बनाने में सफलता हासिल कर पाएँगे।

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा की स्थापना सन् 1936 में वर्धा में हुई, जिसके माध्यम से हिन्दी के राष्ट्रव्यापी विस्तार की दिशा में जो दूरदर्शी प्रयास गाँधीजी ने किए, उसका परिणाम हम सबके

सामने है। हिंदी के प्रति गाँधीजी का समर्पण ऐसा था कि वे तमाम समकालीन हस्तियों को अपना भाषण हिंदी में देने के लिए प्रेरित करते थे। इस संदर्भ में टैगोर ने एक संस्मरण में लिखा है कि जब उन्हें एक बार गुजरात में व्याख्यान देने के लिए आमंत्रित किया गया तो उन्होंने गाँधीजी से पूछा कि वे भाषा में व्याख्यान दें? जवाब में गाँधीजी ने कहा कि, 'जैसी भी हिंदी आती हो, उसी हिंदी में।' उनके इस सुझाव से प्रेरित होकर टैगोर ने हिंदी में ही व्याख्यान दिया। आगे चलकर हिंदी में दिए गए उस व्याख्यान को टैगोर ने अपने जीवन के अविस्मरणीय अनुभवों में गिना। इसी तरह एक राष्ट्रभाषा सम्मेलन में लोकमान्य तिलक द्वारा अपना भाषण अंग्रेजी में दिए जाने पर गाँधीजी ने कहा था, ''बस इसलिए मैं कहता हूँ कि हिंदी सीखने की आवश्यकता है।'' इसके बाद लोकमान्य तिलक ने गाँधीजी के हिंदी भाषा संबंधी सुझाव पर अमल करते हुए अपना व्याख्यान हिंदी में देना शुरू किया।

स्वतंत्रता आंदोलन के लगभग सभी नेताओं ने गाँधीजी के विचारों का अनुसरण करते हुए, हिंदी सीखने और हिंदी को अपने जीवन–व्यवहार में बढ़ावा देने का निरंतर प्रयास किया। गाँधीजी का समय और व्यक्तित्व कितना प्रेरक था कि एक गुजराती, दूसरे बंगाली, मराठी, या अन्य किसी भाषा–भाषी से राष्ट्रहित के लिए यदि हिंदी को अपनाने का सुझाव देता था तो बिना किसी विवाद के उसके सुझाव को उसके कालखंड के दिग्गज भी स्वीकार कर लेते थे। लेकिन, आज जब हिंदी की बात की जाती है तो अन्य भाषा–भाषी समाज के कुछ लोग उसे शक की निगाह से देखने लगते हैं। राष्ट्र और राष्ट्रहित गौण हो जाता है, स्थानीयता–प्रांतीयता से जुड़ी अस्मिता हावी हो जाती है। विभाजनकारी राजनीति शुरू हो जाती है। अंग्रेज जाते–जाते हमें बाँटो और राज करो की नीति सिखा गए थे। अंग्रेजों के जाने के 75 वर्षों बाद भी हमने इस नीति को अपने लोगों को बरगलाने का माध्यम बना लिया है। गाँधीजी के कालखंड में परस्पर भाईचारा तथा भरोसा कायम था। गाँधीजी के व्यक्तित्व को देखकर महान वैज्ञानिक आइन्स्टाइन ने 2 अक्तूबर, 1944 को गाँधीजी के जन्मदिवस पर अपने संदेश में लिखा कि, ''आनेवाली नस्लें शायद मुश्किल से ही विश्वास करेंगी कि हाड़–मांस से बना हुआ कोई ऐसा व्यक्ति भी धरती पर चलता–फिरता था।'' गाँधीजी को महात्मा और राष्ट्रपिता के रूप में स्वीकार करने वाला यह देश आजीवन उनका ऋणी रहेगा।

उपर्युक्त समस्त बिंदुओं पर चिंतन–मनन के उपरांत निष्कर्ष के रूप में यह उल्लेख करना उचित होगा कि गाँधीजी के भाषा संबंधी विचारों को अपनाकर ही हम आज हिंदी को उसका अपेक्षित स्थान दिला सकते हैं। हमें गाँधीजी के जीवन और आचरण से निरंतर बहुत कुछ सीखने की आवश्यकता है। आज के बाजारवादी सर्वग्रासी वातावरण में चारों ओर जो अशांति, हिंसा और प्रदर्शन के सहारे गलाकाट प्रतिस्पर्धा है, उसका निदान गाँधी–मार्ग में है। हिंदी भाषा की सेवा के द्वारा राष्ट्र को मजबूती प्रदान करने के साथ–साथ गाँधीजी के बताए रास्ते पर चलकर हम समाज में शांति, भाईचारा, समता, सुरक्षा की भावना का विकास कर सकते हैं। इन सभी लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए हमारी भाषा

एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगी। भाषा के संरक्षण और संवर्धन की ज़िम्मेदारी हम हिन्दुस्तानियों की है। राष्ट्रभाषा के रूप में गाँधीजी द्वारा हिंदी की उपयुक्तता के संदेश को हमें अपने जीवन में आत्मसात करना होगा। परस्पर विश्वास करना और विश्वास जीतना होगा। यही हमारे हित में है, हमारे समाज और राष्ट्र का भी इसी में भला है। गाँधीजी के प्रति अपनी सच्ची श्रदांजलि एवं उन्हें निरंतर स्मरण रखने का यही सर्वोत्तम मार्ग भी है।

संदर्भ

1. राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति सत्याग्रह – महात्मा गांधीजी. 17 दिसंबर, 2019 को https://bharatdiscovery.org/india/राष्ट्रभाषा हिंदी के प्रति सत्याग्रह महात्मा गाँधी. से लिया गया है।
2. न्यूज 18, 14 सितंबर, 2018. गाँधी 150–हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने के मामले में नहीं मानी गई थी गाँधी की राय, 17 दिसंबर, 2019 को https://hindi.news18.com/news/knowledge/what-were-the-views-of-mahatma-gandhi-on-hindi-as-national-language-1513109.html से लिया गया है।
3. वेब दुनिया, हिंदी भाषा पर महात्मा गाँधी के विचार, 17 दिसंबर, 2019 को https://hindi.webdunia.com/hindi-diwas-special/mahatma-gandhi-on-hindi-language-117090900077_1.html से लिया गया है।
4. पत्र नहीं मित्र–देशबन्धु, 6 अक्तूबर, 2019. गाँधी जी की नज़र में हिन्दी. 17 दिसंबर, 2019 को http://www.deshbandhu.co.in/vichar/hindi-according-to-gandhiji-77525-2 से लिया गया है।
5. गाँधी का हिंदी प्रेम, भारत–दर्शन, 17 दिसंबर, 2019 को https://www.bharatdarshan.co.nz/litcollection/literature/339/gandhis-hindi-love.html से लिया गया है।

❍❍❍❍❍

सादगी

भारत के प्रथम राष्ट्रपति ड़ा राजेन्द्र प्रसाद अत्यंत सादगी भरा जीवन जीते थे और किसी को भी कष्ट देने से बचते थे। उन्होंने कभी और किसी को भी अपनी बात मान लेने पर मजबूर नहीं किया, न ही किसी पर अपनी कोई पसन्द थोपी। वे अपना काम खुद करने पर जोर देते थे। एक बार वे रात में काफी देर हो जाने पर इलाहाबाद (वर्तमान प्रयागराज) पहुंचे। 'आनन्द भवन', जहां वे रहते थे, के दरवाजे बन्द हो चुके थे – लोग सो रहे थे। अतः उन्होंने किसी को परेशान करना ठीक नहीं समझा और तागें से सामान उतार कर चुपचाप बरामदे में बिस्तर बिछा लिया। सुबह होने पर ही लोगों को मालूम हुआ कि राजेन्द्र बाबू आये हैं। इसी सादगी के साथ राजेन्द्र बाबू जीवन–पर्यन्त तपस्वी बन कर रहे।

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 25

21 की उम्र लड़कियों के विवाह के लिए वरदान है या अभिशाप

– सौरभ मिश्र

भारतीय समाज पर अकसर पुरुष शासित होने का आरोप लगता रहा है। पर विगत कई दशकों के दौरान हुए सामाजिक परिवर्तनों के कारण जनमानस और व्यवस्था की सोच में एक हद तक सकारात्मक बदलाव आया है। परिणामस्वरुप शिक्षा हो या स्वास्थ्य, खेल हो या नौकरी, आज हर क्षेत्र में लड़कों और लड़कियों को समान रुप से महत्ता प्रदान करने की कोशिश हो रही है। यहां तक की विवाह करने तक के लिए समान अवसर दिए जा रहे हैं। ऐसे में कोई कारण नहीं बनता कि विवाह की न्यूनतम उम्र को लेकर दोनों में कोई भेदभाव किया जाए।

सामान्यतः विद्यार्थी 18 वर्ष की उम्र तक पहुचते–पहुचते कॉलेज की पढ़ाई पूरी नहीं कर पाते। विवाह का उम्र 21 वर्ष होने के कारण लड़कों को तो अपनी पढ़ाई पूरी करने और अच्छी नौकरी हेतु तैयारी करने का मौका सहज ही मिल जाता है। पर विवाह का उम्र कम तय रहने के कारण लड़कियों को यह अवसर नहीं मिल पाता। ऐसे में यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि लड़कियों को यह मौका क्यों ना दिया जाए।

वनइण्डिया हिन्दी द्वारा किए गए एक सर्वेक्षण से प्राप्त आंकडों के अनुसार भारत के पड़ोसी देश चीन में लड़कों की शादी की उम्र 22 वर्ष तथा लड़कियों की उम्र 20 वर्ष है। यूनाईडेड किंगडम के इंग्लैण्ड और वेल्स में 16 से 18 वर्ष की आयु में लड़के और लड़कियाँ दोनों ही शादी कर सकते हैं। वहीं कनाडा, आस्ट्रेलिया तथा आस्ट्रिया में लड़के व लड़की दोनों के लिए शादी की वैधानिक उम्र 18 वर्ष है। हमारे देश में एक दौर ऐसा भी रहा जब बाल विवाह तक की प्रथा समाज में प्रचलित हो गई थी जिसके दुष्परिणामों को देखते हुए सन् 1978 में कानूनन विवाह की एक निश्चित आयु तय की गई जो लड़कियों के लिए 18 वर्ष और लड़कों के लिए 21 वर्ष था। पर विगत 44 वर्षों में देश के सामाजिक परिदृश्य में व्याप्क परिवर्तन आया है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि कानून भी समाज की बदलती सोच पर विचार करे। कैबिनेट द्वारा लड़कियों के विवाह की उम्र 18 वर्ष से बढ़ाकर 21 वर्ष करने को दी गई मंजूरी इसी विमर्श का परिणाम है।

अगर हम आज के समाज में महिला शिक्षा पर विचार करते हुए देखें तो पाते हैं कि कैबिनेट द्वारा दी गई इस मंजूरी का संबंध बालिकाओं को अच्छी शिक्षा प्रदान करने की मुहिम से है। इसका निहितार्थ लड़कियों को भी लड़कों के समान समय उपलब्ध कराने से है ताकि वे भी अपनी शैक्षिक योग्यता बढ़ा कर एक उद्यमी बन स्वावलम्बन की राह पर आगे बढ़ सकें। शैक्षिक प्रगति के लिए समान समय मिलने पर लड़कों और लड़कियों के बीच एक बड़ी असमानता को दूर करने का आधार प्राप्त होगा जिससे महिला भी समाजिक एवं शैक्षिक क्षेत्र में पुरुष के साथ कन्धे से कंधा मिलाकर चलने की हिम्मत जुटा पाएगी।

पूर्व में भारत सरकार, राज्य सरकारों, शैक्षिक संस्थानों एवं विविध स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा संचालित जन आंदोलनों के कारण भारतीय जनमानस में शिक्षा, स्वास्थ्य, महिला सशक्तीकरण, कौशल विकास, स्वावलम्बन आदि के प्रति एक नई चेतना का संचार हो पाया जिसके कारण देश के साक्षरता दर में उल्लेखनीय वृद्धि हुई। इस वृद्धि ने महिला एवं पुरुष दोनों के ही शैक्षिक उपलब्धियों को समान रुप से प्रभावित किया है। यही वजह है कि भारत में महिला साक्षरता दर जो सन् 2001 में 54.16 प्रतिशत थी वह बढ़ते–बढ़ते सन् 2011 तक 65.46 प्रतिशत हो गई। विदित है कि सन् 1951 में महिला साक्षरता दर महज 8.86 प्रतिशत हुआ करती थी। तालिका 1 में भारत में सन् 1951 से लेकर 2011 तक हुए सभी सात जनगणनाओं से प्राप्त साक्षरता दरों को दर्शाया गया है जो निम्न प्रकार है:

तालिका 1

1951–2011 की जनगणना के अनुसार भारत की साक्षरता दर (प्रतिशत में)

जनगणना वर्ष	कुल साक्षरता दर	पुरुष साक्षरता दर	महिला साक्षरता दर
1951	18.3	27.2	8.9
1961	28.3	40.4	15.4
1971	34.5	46.0	22.0
1981	43.6	56.4	29.8
1991	52.2	64.1	39.8
2001	64.8	75.3	53.7
2011	73.00	80.9	64.6

तालिका 1 से स्पष्ट है कि सन् 1951–2011 के दौरान भारत की महिला साक्षरता दर में 55.7 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इससे यह ज्ञात होता है कि आजादी के बाद के कई दशकों में महिला साक्षरता को अपेक्षित प्रोत्साहन नहीं मिल पाया। संभव है कि उस दौर में सरकार और राष्ट्रीय नेतृत्व की वरीयता कुछ और बिन्दुओं पर रही होगी। आज हालात बदले हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ सहित अनेक अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिबद्धताओं ने साक्षरता, विशेषरुप से महिला साक्षरता को सभी स्तरों पर प्रमुखता प्रदान किया है जिसे दुनिया भर के राष्ट्रीय सरकारों द्वारा अनुमोदित किया गया है। भारत सरकार द्वारा भी महिला साक्षरता एवं सशक्तीकरण पर प्र्याप्त बल दिया जा रहा है। इतना ही नहीं महिला साक्षरता दर को बढ़ाने हेतु सरकार द्वारा प्र्याप्त प्रोत्साहन भी दिया जा रहा है। प्रौढ़ एवं आजीवन शिक्षा के क्षेत्र में राष्ट्रीय साक्षरता मिशन से लेकर साक्षर भारत कार्यक्रम तक चली योजनाओं ने सुनियोजित ढंग से असाक्षर लोगों को साक्षर बनाने की संरचना विकसित की जिसके कारण सार्वभौमिक साक्षरता की ओर बढ़ने में उल्लेखनीय मदद मिली।

सार्वभौमिक साक्षरता के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए प्रारम्भ किए गए कार्यक्रमों के क्रियान्वयन

में अन्य सभी राज्यों के साथ उत्तराखण्ड ने भी हमेशा बढ़–चढ़ कर भाग लिया है। यही कारण है कि साक्षरता की दृष्टि से हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली एवं उत्तर प्रदेश जैसे पड़ोसी राज्यों के बीच उत्तराखण्ड की स्थिति भी सम्मान जनक है। तालिका 2 में सन् 2011 की जनगणना के अनुसार उपरोक्त राज्यों के वर्तमान साक्षरता दरों को घटते क्रम में दिखया गया हैः

तालिका 2

2011 की जनगणना के अनुसार भारत एवं उत्तराखण्ड तथा उसके पड़ोसी राज्यों की साक्षरता दर (प्रतिशत में)

राज्य	कुल साक्षरता दर	पुरुष साक्षरता दर	महिला साक्षरता दर
भारत	73.00	80.9	64.6
दिल्ली	86.21	90.94	80.76
हिमाचल प्रदेश	83.78	90.83	76.60
उत्तराखण्ड	79.63	88.33	70.70
हरियाणा	76.64	85.38	66.77
उत्तर प्रदेश	69.72	79.24	59.26

तालिका 2 से स्पष्ट है कि उत्तराखण्ड राज्य की साक्षरता दर भारत की राष्ट्रीय साक्षरता दर से कहीं ज्यादा है। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार भारत की कुल साक्षरता दर 73.00 प्रतिशत थी जिसमें महिलाओं की साक्षरता दर 64.6 और पुरुषों की साक्षरता दर 80.9 प्रतिशत थी। उत्तराखण्ड के पड़ोसी राज्यों यथा हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, दिल्ली एवं उत्तर प्रदेश के तुलनात्मक स्थिति की बात की जाये तो उत्तराखण्ड ठीक तीसरे स्थान पर दिखता है। पहले स्थान पर दिल्ली है जिसकी कुल साक्षरता दर 86.21 प्रतिशत, पुरुष साक्षरता दर 90.94 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 80.76 प्रतिशत है। दूसरे स्थान पर हिमाचल प्रदेश का नाम आता है जहां कि कुल साक्षरता दर 83. 78 प्रतिशत, पुरुष साक्षरता दर 90.83 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 76.60 प्रतिशत है। तीसरे स्थान पर उत्तराखण्ड राज्य है जहां की कुल साक्षरता दर 79.63 प्रतिशत, पुरुष साक्षरता दर 88.33 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 70.70 प्रतिशत है। चौथे एवं पांचवें स्थान पर क्रमशः हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश का नाम आता है। हरियाणा की कुल साक्षरता दर 76.64 प्रतिशत, पुरुष साक्षरता दर 85.38 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 66.77 प्रतिशत है। वहीं उत्तर प्रदेश की कुल साक्षरता दर 69. 72 प्रतिशत, पुरुष साक्षरता दर 79.24 प्रतिशत तथा महिला साक्षरता दर 59.26 प्रतिशत है।

कई सरकारी व गैर सरकारी रिर्पोटों एवं अकादमिक लेखों में विवाह की उम्र, विशेष तौर पर महिलाओं के विवाह की उम्र और सार्वभौमिक साक्षरता के बीच का सहसम्बन्ध बार–बार रेखांकित

होता रहा है। सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्यों (एम.डी.जी. 2015) जिनके द्वारा सन् 2015 तक विश्व भर के विकासात्मक गतिविधियों को दिशा प्रदान किया जाता रहा, के लक्ष्य क्रमांक 2 की उपलब्धियों पर जारी कई रिर्पोटों में सार्वभौमिक साक्षरता की राह में आई प्रमुख अड़चनों में बालविवाह, विशेष रुप से कम उम्र में बालिका विवाह का उल्लेख किया जाता रहा है।

यूनिसेफ द्वारा जारी आंकडों के अनुसार दुनियाभर में हुए कुल बालविवाहों के 40 प्रतिशत से ज्यादा बालविवाह भारत में ही होते हैं। यूनिसेफ के द्वारा ही जारी स्टेट ऑफ वर्ल्ड चिलड्रेन–2009 रिर्पोट के अनुसार भारत में 20 से 24 वर्ष आयु वर्ग की युवतियों में 47 प्रतिशत का विवाह 18 वर्ष तक पहुंचनें के पूर्व ही हो जाती थी। ग्रामीण इलाकों में यह आंकडा लगभग 56 प्रतिशत था। राज्यवार देखें तो बिहार में 46 प्रतिशत, पश्चिम बंगाल में 41 प्रतिशत, राजस्थान में 40 प्रतिशत, झारखण्ड में 36 प्रतिशत, उत्तर प्रदेश में 33 प्रतिशत, तथा दादरा और नगर हवेली, मध्य प्रदेश और आन्ध्रप्रदेश में 29 प्रतिशत लडकियों का विवाह 18 वर्ष की आयु तक पहुंचने के पूर्व ही हो गया था। अर्थात इन राज्यों में लगभग प्रति 4 में से एक लड़की का विवाह 18 वर्ष की आयु के पूर्व हो गया था। उत्तराखण्ड सहित देश के शेष 16 राज्यों यथा हिमाचल प्रदेश, लक्ष्यद्वीप, गोवा, चण्डीगढ़, पॉडिचेरी, दमन और दीव, पंजाब, दिल्ली, अण्डमान तथा निकोबार द्वीपसमूह, मणिपुर, केरल, जम्मू कश्मीर, अरुणाचल प्रदेश, तमिलनाडु तथा मिजोरम में प्रति 10 बालिकाओं में से एक का विवाह 18 वर्ष की आयु के पूर्व हो गया था। उपरोक्त रिर्पोट के अनुसार केरल एवं हिमाचल प्रदेश को छोड़ देश के शेष सभी राज्यों में महिला साक्षरता दर को आगे ले जाने में बालविवाह का नकारात्मक प्रभाव स्पष्ट रुप से प्रतिलक्षित होता है।

देश के प्रधानमंत्री द्वारा 15 अगस्त 2020 को लाल किले की प्राचीर से यह घोषणा की गई थी कि लड़कियों की शादी की उम्र को 18 वर्ष से बढ़ाकर 21 वर्ष कर दिया जाएगा। अब इसे कैबिनेट ने मंजूरी दे दी है। ऐसे में यह उम्मीद की जा सकती है कि आने वाले वर्षों में महिला साक्षरता की राह एक हद तक सुगम हो सकेगी और भारत सत्त विकास लक्ष्यों को समय से पूरा करने में सफल हो सकेगा।

संदर्भ

1. गर्ल्स एजुकेशन इन इण्डिया (पत्रक), जयदेव शाहू, राजेश हजारे, कल्पना शर्मा एवं अनिता खन्ना, लोकसभा सचिवालय, दिल्ली।
2. स्टेट ऑफ वर्ल्ड चिलड्रेन–2009 रिर्पोट।
3. www.jagran.com(https://www.jagran.com/news/national-why-need-to-reconsider-the-minimum-age-limit-of-marriage-for-girls-in-india-jagran-special-20889859.html)
4. www.denikbhaskar.com-(https://www.bhaskar.com/dboriginal/explainer/news/minimum-age-for-marriage-of-women-from-18-to-21-in-india-129215015.html)
5- www.hindi.oneindia.com(https://hindi.oneindia.com/news/india/age-of-marriage-of-girls-going-to-be-21-in-india-know-what-is-the-minimum-age-in-other-countries-653527.html)

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 29

युवा आबादी का लाभ

–जतिंदर सिंह

केवल 28 वर्ष की माध्य आयु वाले भारत के 1.38 अरब लोग दुनिया की सबसे युवा आबादियों में शुमार हैं। अधिक विकसित और आर्थिक रूप से अधिक स्थिर चीन तथा अमेरिका भारत की तुलना में कहीं अधिक तेजी से बूढ़े हो रहे हैं। इस समय दुनिया की युवा आबादी का पांचवां हिस्सा हमारे देश में ही है। हम आबादी के लिहाज से फायदे में या जनांकिकी लाभ की स्थिति में हैं। संयुक्त राष्ट्र जनसंख्या कोष इस दौर को आबादी की आयु में आए बदलाव के कारण होने वाली आर्थिक वृद्धि कहता है। यह ऐसा दौर है जहां कामकाजी उम्र वाली आबादी उस पर आश्रितों की आबादी से अधिक है। हमारी युवा आबादी आर्थिक वृद्धि की दृष्टि से कीमती संपदा है; जो वैश्विक महाशक्ति बनने का महत्वाकांक्षी लक्ष्य पूरा करने तथा 2024–25 तक 5 लाख करोड़ डॉलर की अर्थव्यवस्था बनने का लक्ष्य हासिल करने में अहम भूमिका निभाएगी। तेजी से बदलते वैश्विक परिदृश्य में भारत के पास बहुत समय नहीं है। एक अनुमान के अनुसार इस जनांकिकी लाभांश का फायदा उठाने के लिए भारत के पास केवल 20 वर्ष बचे हैं।

उद्यमशीलता की क्षमता बढ़ाना

श्रमबल यदि शिक्षित और रोजगार योग्य कौशल वाला हो तो देश की राष्ट्रीय आय बढ़ जाती है। इंटरनेट और सोशल मीडिया की उपलब्धता ने डिजिटल जानकारी वाली आबादी तैयार कर दी है। हमारे युवा ऊंची साक्षरता दर के साथ–साथ डिजिटल जानकार हैं। हमारे राष्ट्र के पास उद्यमशीलता की नई संस्कृति के साथ रोजगार सृजन के मौके हैं। उथलपुथल मचा देने वाली प्रौद्योगिकियों ने स्टार्टअप का तंत्र तैयार कर दिया है, जो स्वास्थ्य–सेवा, शिक्षा, ई–कामर्स, कृषि, व्यापार तथा कई अन्य क्षेत्रों में सेवाएं प्रदान कर रहा है। आकांक्षाओं तथा गुणवत्ता भरे जीवन की चाहत में हमारा युवा कृत्रिम मेधा, मशीन लर्निंग, डेटा विज्ञान तथा इंडस्ट्री 4.0 जैसी नए जमाने की प्रोद्यौगिकियों में एकदम आगे खड़ा है। हमारा युवा उभरता हुआ उपभोक्ता वर्ग है; कंपनियां उसी के मुताबिक कीमत वाले उत्पाद एवं सेवाएं तैयार कर रही हैं। डिजिटल भुगतान, ई–वॉलेट, कम ब्याज दर पर कर्ज की सुविधाओं ने युवा आबादी की उद्यमिता की चाहत और बढ़ाई है। चूंकि उनकी खर्च करने की क्षमता बढ़ रही है, इसलिए बाजार बढ़ना तय है, जिससे आर्थिक गतिविधियां तेज होंगी। हमारी युवा आबादी स्थानीय और वैश्विक निवेश के लिहाज से भी आकर्षक है। अपनी उद्यमशील युवा आबादी के कारण भारत वैश्विक निवेश का ठिकाना बन चुका है।

निजी और सार्वजनिक क्षेत्र के कई कार्यक्रम देश के युवाओं को कौशल प्रदान कर रहे हैं। राष्ट्रीय कौशल विकास मिशन क्रांतिकारी कार्यक्रम है, जो युवाओं को विभिन्न क्षेत्रों में रोजगार प्राप्त करने योग्य कौशल प्रदान कर रहा है और उत्पादकता तथा क्षमता भी बढ़ा रहा है। भारत सरकार के स्टार्टअप

इंडिया, डिजिटल इंडिया तथा प्रधानमंत्री मुद्रा योजना जैसे कार्यक्रमों ने उद्यमशीलता को और बढ़ावा दिया है तथा रोजगार के मौके बढ़ाए हैं। लेकिन समावेशी वृद्धि (इनक्लूसिव ग्रोथ) तभी हो सकती है, जब महिला सशक्तीकरण पर ध्यान दिया जाए। नारी शक्ति की महत्ता पर सरकार का जोर समावेशी वृद्धि के मुख्य स्तंभों में से एक है। यह महिलाओं के नेतृत्व वाले उद्यमों के विकास तथा मजबूती का रास्ता भी साफ करेगा।

बजट आवंटन

2022–23 के बजट में वृद्धि को गति देने के लिए अमृत काल का खाका पेश किया गया है, जो भविष्योन्मुखी तथा समावेशी है और जिससे शिक्षा, कौशल विकास तथा रोजगार के लिए उज्जवल भविष्य की आस जगती है। वर्तमान बजट में शिक्षा क्षेत्र के लिए आवंटन 11.86 प्रतिशत बढ़ा दिया गया है, जिससे युवाओं के उन्नयन तथा सशक्तीकरण की मंशा जाहिर होती है। बजट आवंटन का हमारे युवाओं, महिलाओं तथा किसानों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

गति–शक्ति आर्थिक वृद्धि एवं सतत् विकास का प्रगतिशील मॉडल है, जो उत्पादकता बढ़ाएगा तथा निवेश लाएगा। इस मॉडल को सात इंजनों से गति मिलती है – सड़क, रेल, हवाई अड्डे, बंदरगाह, जन–परिवहन, जलमार्ग एवं लॉजिस्टिक्स बुनियादी ढांचा। यह सार्वजनिक एवं निजी क्षेत्र के प्रयासों को बढ़ाकर आर्थिक वृद्धि को तेज करेगा, जिससे युवाओं को रोजगार एवं उद्यमिता के भरपूर मौके मिलेंगे। इससे बुनियादी ढ़ांचे के लिए सार्वजनिक निवेश बहुत बढ़ जाएगा तथा भारत 100 प्रतिशत शिक्षित आबादी के लिए तैयार हो जाएगा।

कोविड के बाद के दौर में शिक्षा एक ऐसी नई पटरी पर आ गई है, जो प्रौद्योगिकी आधारित मिश्रित शिक्षा है। बजट शिक्षा के समावेशी अवसरों का लक्ष्य लेकर शैक्षिक साधनों को सभी के लिए उपलब्ध एवं सुलभ बनाने की राह खोलता है। बोली जाने वाली सभी भाषाओं में उच्च गुणवत्ता वाली ई–सामग्री तैयार करने की घोषणा हुई है। यह सामग्री डिजिटल शिक्षकों की मदद से इंटरनेट, मोबाइल फोन, टेलीविजन एवं रेडियो के जरिये प्रदान की जाएगी। इससे सभी के लिए शिक्षा सुलभ हो जाएगी और ग्रामीण क्षेत्रों में युवा शिक्षा प्राप्त कर सशक्त होंगे तथा उन्हें लगातार सीखने का मौका मिलेगा। इसका मकसद शिक्षा को अधिक सुलभ तथा किफायती बनाना है, जिससे बढ़ती हुई युवा आबादी में उद्यमशीलता तथा कौशल का विकास तेज होगा। बजट की एक अन्य बड़ी विशेषता विदेशी विश्वविद्यालयों एवं संस्थाओं को गिफ्ट आईएफएसीसी (इंटरनेशनल फाइनेंशियल सर्विसेज सेंटर) के तहत फिनटेक एवं स्टेम (विज्ञान, प्रौद्योगिकी, अभियांत्रिकी एवं गणित) पर पाठ्यक्रम उपलब्ध कराने की अनुमति प्रदान किया जाना है। इससे उन विदेशी संस्थाओं को भारत लाने का प्रयास माना जा रहा है, जो भारतीय संस्थाओं के साथ तालमेल की संभावना तलाश रही हैं मगर नियामकीय चुनौतियों के कारण अभी तक ऐसा नही कर सकी थीं। इस कदम का देश की आर्थिक वद्धि पर कई गुना बड़ा प्रभाव होगा। पूर्वोत्तर क्षेत्र में विकास की गतिविधियों के लिए 1500 करोड़ रूपये आवंटन वाली पूर्वोत्तर के लिए प्रधानमंत्री विकास पहल (पीएम–डिवाइन) उस क्षेत्र में युवाओं की आजीविका की गतिविधियां बढ़ाएंगी।

स्टार्टअप

2022–23 के बजट में नवाचार को बढ़ावा दे रहे स्टार्टअप एवं डिजिटल तंत्र पर बहुत जोर दिया गया है। कृत्रिम मेधा, भू–आकाशीय तंत्रों, ड्रोन, सेमीकंडक्टर तंत्र, जीनोमिक्स, हरित ऊर्जा, स्वच्छ मोबिलिटी तंत्र एवं फार्मास्युटिकल्स पर जोर बढ़ा है। यह युवाओं के नेतृत्व वाले नए भारत की आर्थिक एवं सामाजिक वृद्धि का इंजन होगा। युवाओं के लिए रोजगार के अवसर तैयार करने के अलावा यह उद्योग को सक्षम एवं प्रतिस्पर्धी भी बनाएगा। युवाओं की ताकत सामने लाने के लिए प्रौद्योगिकी एवं नवाचार के प्रति सरकार का संकल्प सराहनीय है। डिजिटल मुद्रा, 5–जी सेवाएं, एम्बेडेड चिप वाले ई–पासपोर्ट जैसी भविष्ययोन्मुखी प्रौद्योगिकी हमारे देश को भविष्योन्मुखी एवं आधुनिक बनाने की दिशा में उठाए गए कदम हैं। कौशल विकास एवं आजीविका के लिए डिजिटल तंत्र देश–स्टैक ई–पोर्टल आरंभ होने से उद्यमिता के अवसर तो उत्पन्न होंगे ही, युवा आबादी को सीखने एवं अपना कौशल तराशने की प्रेरणा भी मिलेगी। इससे उन्हें ऑनलाइन प्रशिक्षण के जरिये नये कौशल प्राप्त करने एवं कौशल बढ़ाने में मदद मिलेगी। विश्लेषण की प्रवृत्ति को बढ़ावा देने और रचनात्मक सोच पैदा करने की कोशिश में विज्ञान तथा गणित में 750 वर्चुअल प्रयोगशालाएं और सिम्युलेटेड लर्निंग (मशीनों के द्वारा वास्तविक स्थिति जैसी परिस्थितियां उत्पन्न करना) के लिए 75 स्किलिंग ई–लैब भी स्थापित की जाएंगी। पीएम ई–विद्या कार्यक्रम का विस्तार 12 के बजाय 200 टीवी चैनलों तक किए जाने से युवा छात्रों को सीखने के बेहतर नतीजे मिलेंगे।

रोजगार दिलाने वाले कौशल की कमी हमारे युवाओं के लिए बड़ी चुनौती है। उसके पास उद्योग की बदलती जरूरतों के मुताबिक कौशल होने चाहिए। डिजिटल विश्वविद्यालय आरंभ होने से सुदूर इलाकों में भी गुणवत्ता भरी शिक्षा की पंहुच बढ़ जाएगी। यह काम हब एंड स्पोक (एक मुख्य केंद्र और उससे जुड़े दूर के केंद्र) मॉडल पर काम कर रहे सरकारी विश्वविद्यालयों तथा संस्थाओं के जरिये होगा।

बजट ने एवीजीसी (एनिमेशन, विजुअल इफेक्ट्स, गेमिंग एवं कॉमिक) कार्य बल बनाने की सिफरिश भी की, जो इस क्षेत्र की संभावनाओं का इस्तेमाल करने और राष्ट्रीय तथा वैश्विक मांग पूरी करने के लिए देशी क्षमता तैयार करने के तरीके सुझाएगा। इससे प्रौद्योगिकी की जानकारी रखने वाली हमारी युवा आबादी को इस क्षेत्र में कौशल प्राप्त करने का प्रोत्साहन मिलेगा।

युवा उद्यमिता

भारत के पास मजबूत स्र्टाटअप तंत्र है। 7 फरवरी, 2022 को 63,103 स्टार्टअप उद्योग एवं आंतरिक व्यापार संवर्द्धन विभाग (डीपीआईआईटी) के पास पंजीकृत थे। भारतीय युवा विश्व स्तर के स्टार्टअप खड़े करने में अग्रणी हैं। कोविड–19 के बावजूद 2021–22 में बने यूनिकॉर्न हमारे युवाओं की ताकत दर्शाते हैं। महामारी के दौरान 50 से अधिक स्टार्टअप को यूनिकार्न का दर्जा मिला। बजट में यूनिकार्न के लिए सक्रिय नीतियां घोषित किए जाने के साथ ही भारत के पास नवाचार तथा उद्यमिता की प्रवृत्ति को बढ़ाने की क्षमता है, जिससे रोजगार के ढेरों मौके तैयार होंगे। बजट में कर के मोर्चे पर भी उपाय किए गए हैं, जिनमें कर लाभों का एक वर्ष से अधिक समय के लिए विस्तार करना तथा कारोबारी

सुगमता को बढ़ावा देना शामिल हैं। स्टार्टअप के लिए शुरूआती वर्षों में कार्यशील पूंजी की जरूरतें पूरा करना मुश्किल होता है। इसलिए युवा उद्यमियों की मदद की रणनीति के तहत कर छूट एक वर्ष के लिए बढ़ाई गई है। महामारी के दौरान मुश्किलों से गुजरे स्टार्टअप को इस मदद से नई ताकत मिलेगी। करोबारी सुगमता के उपायों के इस दूसरे चरण से उद्यमियों का हौसला बढ़ेगा और उद्यमशीलता को खासी ताकत मिलेगी। 14 क्षेत्रों में उत्पादकता से जुड़े प्रोत्साहनों की योजना 60 लाख नए रोजगार सृजित कर सकती है और भारतीय युवाओं के लिए यह जबरदस्त शुरूआत होगी, जो इन क्षेत्रों में वृद्धि के लिए बहुत जरूरी है। बजट में किये गये उपाय नए एवं रचनात्मक विचारों से भरे युवा उद्यमियों के लिए मद्दगार होंगे।

युवा कामयाबी आबादी में बढ़ोतरी ने सामाजिक–आर्थिक वृद्धि के लिहाज से भारत के भविष्य के लिए अनूठी संभावनाएं तैयार की हैं। सही समय पर सही मौका दिया जाए तो हमारा देश युवाओं की क्षमताओं का फायदा उठाने में सक्षम होगा। निस्संदेह सरकार युवाओं के सर्वांगीण विकास के लिए यथासंभव सर्वश्रेष्ठ नीतियां एवं योजनाएं ला रही है मगर आने वाले वर्षों में और बहुत कुछ किया जा सकता है। शिक्षा एवं कौशल विकास के क्षेत्र में नवाचारी तथा क्रांतिकारी व्यवस्थाएं तैयार करनी होंगी ताकि युवा शैक्षिक एवं बौद्धिक रूप से विकसित हो और भावी नेता के रूप में हमारे राष्ट्र को चलाने की क्षमता हासिल कर सके।

स्वामी विवेकानंद कहते थे, "उठो, जागो और लक्ष्य प्राप्त करने तक रूको नहीं।" सभी हितधारकों को याद रखना चाहिए कि उन्हें हमारे युवाओं के लिए पर्याप्त अवसरों वाला माहौल तैयार करना है, जिसमें वे नई राह बना सकें, रचना कर सकें और हमारे देश के आर्थिक तथा सामाजिक कल्याण के लिए अपनी क्षमताओं से परे जा सकें।

○○○○○

कर्मठता

डॉ. जाकिर हुसैन कर्मठ और लगन के धनी इंसान थे। कहने की जगह वे करने में विश्वास करते थे। उपदेश देने के बजाय अपने आचरण से रास्ता दिखाना पसन्द करते थे। एक बार उन्होंने ऊंची कक्षाओं में पढ़ाने वाले एक अध्यापक से किसी छोटी कक्षा में पढ़ाने का अनुरोध किया। इसे अपमानजनक समझकर वे अध्यापक उस कक्षा में नहीं गए। दुबारा कहने पर उन्होंने उस कक्षा को पढ़ाने से साफ इनकार कर दिया। डॉ. साहब को इसकी सूचना मिली तो वे स्वयं उस कक्षा में पढ़ाने चले गए। यह जानकर उस महाशय को अपनी गलती का एहसास हुआ और वे तुरन्त उस कक्षा को सम्हालने जा पहुचें। डॉ. साहब ने मुस्कुराते हुए उनका स्वागत किया और कुछ कहे बिना उन्हें कक्षा सौंप कर चले गए।

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 33

बाल संरक्षण

– समीरा सौरभ

भारत दुनियां के सबसे युवा देशों में से एक है – ऐसा अनुमान है कि 2050 तक दुनियां की आधी आबादी भारत सहित नौ देशों से होगी। किसी भी देश के लिए, बच्चे भविष्य की पूंजी होते हैं। ये ऐसी संपत्ति है, जिन्हें पोषित करने की आवश्यकता होती है, यदि सही मायने में जनसंख्या का लाभ प्राप्त करना है। 2020 में महामारी की चपेट में आने के बाद, हजारों बच्चे अनाथ हो गए हैं। 30 मिलियन अनाथ और परित्यक्त बच्चों के लिए नीतियों की समीक्षा की जानी चाहिए और बच्चों की देखभाल संबंधी नीतियों को तत्काल लागू करके इन पर ध्यान दिया जा सकता है।

भारत की आबादी का एक बड़ा हिस्सा – लगभग 158 मिलियन, 0 – 6 साल के आयु वर्ग के बच्चे है। भारत में 18 साल की उम्र तक के 472 मिलियन बच्चे है जो देश की कुल आबादी का 39 प्रतिशत हैं। भारत में लगभग 30 मिलियन अनाथ और परित्यक्त बच्चे हैं – जो कि युवा आबादी का लगभग 4 प्रतिशत है।

संयुक्त राष्ट्र बाल कोष (यूनिसेफ) के अनुसार, भारत में 29.6 मिलियन अनाथ और परित्यक्त बच्चे है। हालांकि, निजी संगठनों द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़ों से पता चलता है कि सन् 2017 में इन 30 मिलियन बच्चों में से केवल 470,000 बच्चे संस्थागत देखभाल में थे। इनका केवल एक छोटा सा हिस्सा अर्थात लगभग आधा मिलियन बच्चे ही परिवार की देखभाल में थे। तात्पर्य यह कि देश में अनाथ और परित्यक्त बच्चों में से, केवल आधा मिलियन बच्चों को ही परिवार की देखभाल मिल पाती है, क्योंकि भारत में गोद लेने की दर बहुत कम है। इसका मतलब है कि बाल विकास के क्षेत्र में सरकार द्वारा एक बड़ा पुनर्समायोजन करने की आवश्यकता है, क्योंकि वर्तमान में लाखों बच्चे, सुरक्षा और अच्छे स्वास्थ्य का जीवन जीने के अवसरों से वंचित है। भारत में गोद लेने की दर हमेशा से ही कम रही है और पिछले कुछ वर्षों में इसमें और गिरावट आई है। सरकार के केंद्रीय दत्तक ग्रहण संसाधन प्राधिकरण (सीएआरए) के आंकडे बताते हैं कि सन् 2010 में देश में 5693 बच्चों को और 2017–2018 में केवल 3276 बच्चों को गोद लिया गया था। यह गिरावट इसलिए हुई क्योंकि छोड़े गए अर्थात अनाथ और परित्यक्त लगभग 30 मिलियन बच्चों में से केवल 261,000 ही संस्थागत देखभाल के अधीन हैं, जो कि केवल 0.87 प्रतिशत हैं।

आंकड़ों से पता चलता है कि जहां 29,000 से अधिक दंपत्ति बच्चों को गोद लेने के इच्छुक हैं, वहीं केवल 2,317 से 3,000 बच्चे ही गोद लेने के लिए उपलब्ध हैं। भारत में दत्तक ग्रहण कानून सख्त हैं, जिसके कारण गोद लेने की संख्या काफी कम है। मार्च 2019 – 2020 में केवल 3,351 बच्चों को गोद लिया गया है। यह गोद लेने वाले बच्चों और भावी माता–पिता के बीच एक व्यापक अंतर को दर्शाता है। भारत में गोद लेने के निम्न स्तर के कई कारण हैं।

सबसे पहले, गोद लेने के लिए पर्याप्त बच्चे उपलब्ध नहीं हैं क्योंकि परित्यक्त बच्चों का संस्थागत

देखभाल अनुपात बहुत कम है। भारत में बच्चों का सड़कों पर होना सबसे आम नजारा है। जिला बाल संरक्षण अधिकारी को सड़क पर रहने वाले बच्चों को बाल देखभाल संस्थान (सीसीआई) तक पहुंचाना चाहिए, और यदि उनके माता–पिता नहीं मिलते हैं, तो उन्हें गोद लेने के लिए रखा जाना चाहिए।

राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग (एनसीपीसीआर) के आंकड़ों से पता चलता है कि भारत में 5,850 पंजीकृत और 8,000 से अधिक गैर–पंजीकृत सीसीआई हैं। नियमों के अनुसार, केवल पंजीकृत संस्थान को ही गोद लेने वाली एजेंसियों से जोड़ा जा सकता है। सभी पंजीकृत और गैर–पंजीकृत सीसीआई में कुल 2,32,937 बच्चे हैं। हालांकि, भारत में सभी सीसीआई कानून के तहत पंजीकृत नहीं हैं। गैर–पंजीकृत संस्थानों में बच्चे खराब देखभाल, शारीरिक हिंसा, यौन शोषण और तस्करी का शिकार हो सकते है। सरकार को लाखों बच्चों को संस्थागत देखभाल और एक परिवार का हिस्सा बनाने के लिए उन्हें सड़कों से हटाने की रणनीति के साथ–साथ अधिक सीसीआई स्थापित करने पर अधिक संसाधन लगाने चाहिए। यह तब हो सकता है जब सरकार, गैर–पंजीकृत सीसीआई को बंद करने, जिला स्तर के बाल–संरक्षक अधिकारियों को जवाबदेह ठहराने और बच्चा चाहने वालों के लिए एक अन्य विकल्प के रूप में गोद लेने पर देशव्यापी अभियान चलाने के लिए अपना ध्यान, धन और संसाधनों को बढ़ाए।

विकलांगता और दत्तक ग्रहण

जनवरी 2020 में, केंद्रीय दत्तक ग्रहण संसाधन प्राधिकरण (सीएआरए) ने गोद लेने की प्रक्रिया में सुधार कर इसे सुव्यवस्थित करने की संभावना पर चर्चा करने के लिए एक राष्ट्रीय स्तर पर राय ली। चर्चा के अन्य बिंदुओ में, यह भी सामने आया कि संस्था ने 14 उप–श्रेणियों में फैले विशेष आवश्यकता वाले बच्चों का वर्गीकरण तैयार किया है।

यह वर्गीकरण संभावित दत्तक माता–पिता को बच्चों के जरूरतों को बेहतर ढ़ंग से समझने और गोद लेने की संभावनाओं को बढ़ाने में सक्षम करेगा। हालाँकि, सीएआरए द्वारा साझा किए गए नवीनतम उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार, 2018 और 2019 के बीच केवल 40 दिव्यांग बच्चों को गोद लिया गया था, जो वर्ष में गोद लिए गए बच्चों की कुल संख्या का लगभग 1 प्रतिशत है।

वार्षिक रूझानों से पता चलता है कि हर गुजरते साल के साथ विशेष जरूरतों वाले बच्चों का घरेलू दत्तक ग्रहण कम हो रहा है। साथ ही, विशेष आवश्यकता वाले बच्चों को गोद लेने वाले विदेशियों की संख्या लगातार बढ़ रही है। दरअसल ऐसा इसलिए है क्योंकि एक 'स्वस्थ' बच्चे के लिए लंबी प्रतीक्षा करनी पड़ती है।

वर्ष 2015 में केंद्रीय दत्तक ग्रहण संसाधन प्राधिकरण (सीएआरए) की शुरूआत के साथ, गोद लेने की प्रक्रिया में परिवर्तन आया। यह प्राधिकरण, भारत सरकार के महिला और बाल विकास मंत्रालय के तहत एक स्वायत्त और वैधानिक निकाय है। यह प्रणाली गोद लेने वाले बच्चों और भावी माता–पिता के केंद्रीकृत डिजिटल डेटाबेस के रूप मे कार्य करती है। यह प्राधिकरण भारतीय बच्चों को गोद लेने के लिए नोडल निकाय के रूप में कार्य करता है और देश में और अंतराष्ट्रीय दत्तक–ग्रहण की निगरानी और विनियमन के लिए अनिवार्य है। सीएआरए को 2003 में भारत सरकार द्वारा अनुसमर्थित

अंतर–राष्ट्रीय दत्तक ग्रहण पर 1993 हेग कन्वेंशन के प्रावधानों के अनुसार अंतर–देशीय दत्तक ग्रहण से निपटने के लिए केंद्रीय प्राधिकरण के रूप में नामित किया गया है।

यह प्राथामिक रूप से मान्यता प्राप्त दत्तक ग्रहण एजेंसियों के माध्यम से 'अनाथ परित्यक्त और आत्मसमर्पण' बच्चों को गोद लेने से संबंधित है। सन् 2018 में, प्राधिकरण ने लिव–इन संबंधों वाले व्यक्तियों को भारत से और उसके भीतर बच्चों को गोद लेने की अनुमति दी। हालांकि इसका मुख्य फोकस गोद लेने की प्रक्रिया को तेज करना है, क्योंकि प्रतीक्षा की अवधि लंबी होती जा रही है।

भारत में दत्तक ग्रहण प्रथा मुख्य रूप में हिंदू दत्तक ग्रहण और रखरखाव अधिनियम, 1956 (एचएएमए) और किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2000 (जेजे अधिनियम) के अनुसार लागू होता है। दोनों कानूनों के अलग–अलग प्रावधान और उद्देश्य हैं। हिंदू दत्तक ग्रहण और रखरखाव अधिनियम हिंदुओं को और उनके द्वारा गोद लेने की प्रक्रिया को नियंत्रित करता है। यहा 'हिंदुओं' की परिभाषा में बौद्ध, जैन और सिख शामिल हैं। यह एक दत्तक बच्चे को स्वाभाविक रूप से पैदा हुए बच्चे के सभी अधिकार देता है, जिसमें विरासत का अधिकार भी शामिल है।

जेजे अधिनियम बनने तक, अभिभावक और बच्चा अधिनियम (जीडब्ल्यूए), 1980, गैर–हिंदू व्यक्तियों के लिए बच्चों के अभिभावक बनने का एकमात्र जरिया था। चूँकि जीडब्ल्यूए व्यक्तियों को कानूनी अभिभावक के रूप में नियुक्त करता है, न कि प्राकृतिक माता–पिता के रूप में, अतः बच्चे के 21 वर्ष के हो जाने और व्यक्तिगत पहचान ग्रहण करने के बाद संरक्षकता समाप्त कर दी जाती है।

दत्तक ग्रहण प्रक्रिया में हितधारक

1. केंद्रीय दत्तक ग्रहण संसाधन प्राधिकरण, समय–समय पर दत्तक ग्रहण प्रक्रिया के सुचारू संचालन को सुनिश्चित करता है तथा दत्तक ग्रहण कार्यक्रम के विभिन्न हितधारकों द्वारा पालन की जाने वाली प्रक्रियाओं को निर्धारित करने के लिए दिशानिर्देश जारी करता है।
2. राज्य दत्तक ग्रहण संसाधन एजेंसी (एसएआरए) – राज्य दत्तक ग्रहण संसाधन एजेंसी, केंद्रीय दत्तक ग्रहण गैर–प्राधिकरण के साथ समन्यय में गोद लेने और गैर–संस्थागत देखभाल को बढ़ावा देने तथा निगरानी करने के लिए राज्य के भीतर एक नोडल निकाय के रूप में कार्य करती है।
3. स्पेशलाइज्ड एडॉप्शन एजेंसी (एसएए) – एसएए को बच्चों को गोद लेने के उद्देश्य से अधिनियम की धारा 41 की उप–धारा 4 के तहत राज्य सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त है।
4. प्राधिकृत विदेशी दत्तक ग्रहण एजेंसी (एएफएए) – प्राधिकृत विदेशी दत्तक ग्रहण एजेंसी को एक विदेशी सामाजिक या बाल कल्याण एजेंसी के रूप में मान्यता प्राप्त है, जिसे सीएआरए द्वारा भारतीय बच्चे को गोद लेने वाले नागरिक के देश के संबंधित केंद्रीय प्राधिकरण या सरकारी विभाग की सिफारिश पर गोद लेने से संबंधित सभी मामलों के समन्वय के लिए अधिकृत किया गया है।
5. जिला बाल संरक्षण इकाई (डीसीपीयू) – डीसीपीयू, अधिनियम की धारा 61 क के तहत जिला स्तर पर राज्य सरकार द्वारा स्थापित एक इकाई है। यह जिले में अनाथ, परित्यक्त और

आत्मसमर्पण करने वाले बच्चों की पहचान करता है और उन्हें बाल कल्याण समिति द्वारा गोद लेने के लिए कानूनी रूप से मुक्त घोषित करता है।

कानूनी अभिभावक या देखभाल के बिना रह रहे 30 मिलियन बच्चों में से आधे मिलियन से भी कम वास्तव में संस्थागत देखभाल में हैं। बाकी को सड़कों पर भटकने के लिए छोड़ दिया जाता है, जो दुर्व्यवहार और तस्करी का शिकार हो जाते हैं। वास्तव में देखभाल गृहों में इतने कम बच्चे होने के कारण कानूनी रूप से गोद लेने के लिए अधिकांश अनाथ उपलब्ध नहीं हैं। फिर भी, भावी माता–पिता की अपनी पसंद होती है, जिनमें से अधिकांश बिना विकलांगता के और 0 – 2 वर्ष की आयु के बीच के बच्चे को गोद लेना चाहते हैं। भारत में अनाथों खासकर सड़कों पर रहने वालों के लिए कई खतरे हैं। सबसे बड़े जोखिमों में से एक, उनका शोषण है। किशोर न्याय (बच्चों की देखभाल और संरक्षण) अधिनियम, 2015 के अनुसार देश में अनाथ और निराश्रित बच्चे 'देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चे' (सीएनसीपी) हैं। अधिनियम के क्रियान्वयन की प्राथमिक जिम्मेदारी राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्रों की है। महिला और बाल संरक्षण मंत्रालय सेवा (सीपीएस) योजना (तत्कालीन एकीकृत बाल संरक्षण योजना) लागू कर रहा है। योजना के कार्यान्वयन की प्राथमिक जिम्मेदारी राज्य सरकारों/केंद्रशासित प्रदेशों के प्रशासनों की है। सीपीएस के प्रावधानों के तहत, केंद्र सरकार अन्य बातों के साथ–साथ कठिन परिस्थितियों में बच्चों का स्थितिजन्य विश्लेषण करने के लिए राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों को वित्तीय सहायता प्रदान कर रही है। इस योजना के तहत, सीसीआई में 'देखभाल और संरक्षण की आवश्यकता वाले बच्चों' और विधि वैषम्य में बच्चों को संस्थागत देखभाल प्रदान की जाती है। यह योजना गैर–संस्थागत देखभाल भी उपलब्ध कराती है जिसमें गोद लेने, पालक–देखभाल और आर्थिक संरक्षण के लिए सहायता प्रदान की जाती है।

आईसीपीएस (अब, सीपीएस के तहत विभिन्न घटकों के लिए वित्तीय मानदंडों) को 1 अप्रैल 2014 से संशोधित किया गया था। संशोधित योजना की प्रमुख विशेषताओं में बाल–गृहों में बच्चों के लिए रखरखाव अनुदान को 750 रूपये से बढ़ाकर 2,000 रूपये प्रति बच्चा प्रति माह करना शामिल है। अप्रैल 2017 से अम्ब्रेला एकीकृत बाल विकास सेवाओं के तहत आईसीपीएस की उप–योजना के रूप में सीपीएस नाम दिया गया था। उक्त आदेश के अनुसार निम्नलिखित संशोधन प्रभावी हुए हैं:

1. बाल–गृहों में बच्चों के लिए भरण–पोषण अनुदान को बढ़ाकर 2,160 रूपये प्रति बच्चा प्रति माह कर दिया गया।
2. बाल–कल्याण समिति और किशोर न्याय बोर्ड के सदस्यों का बैठक भत्ता नए जेजे मॉडल नियम, 2016 के अनुसार 1,000 रूपये से बढ़ाकर 1,500 रूपये कर दिया गया है।
3. विस्तार और उभरती सुरक्षा जरूरतों को पूरा करने के लिए चाइल्डलाइन इंडिया फाउंडेशन के लिए कार्यक्रम संबंधी आवंटन में 9.70 करोड़ रूपये तक की वृद्धि की गई है।

महिला और बाल विकास मंत्रालय ने प्रस्तुत किया है कि सीधे रिश्तेदार के बीच हिंदू दत्तक ग्रहण के मामले, सीएआरए के पास नहीं आते और इस प्रकार गोद लेने के संबंध में आंकड़े उपलब्ध नहीं है। इस पृष्ठभूमि में, समिति ने सिफारिश की है कि गोद लेने की प्रक्रिया को निर्देशित करने वाले विभिन्न नियमों पर बारीकी से विचार करके गोद लेने की प्रक्रिया को सरल बनाने की आवश्यकता है और

मंत्रालय उन व्यावहारिक कठिनाइयों पर प्रतिक्रिया प्राप्त करने के लिए इस क्षेत्र में काम कर रहे संबंधित विशेषज्ञों के साथ जुड़ सकता है, जिनका सामना संभावित माता–पिता कर रहे हैं।

पैनल ने सिफारिश की है कि विशेष आवश्यकता वाले बच्चों के मुद्दे पर विभिन्न मंचों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, इसके अलावा संभावित माता–पिता को ऐसे बच्चों को गोद लेने के लिए नियमित रूप से संवेदनशील बनाना है। 2018 में, आश्रय गृहों पर एनसीपीसीआर को एक सोशल ऑडिट रिपोर्ट से पता चलता था कि 2,874 बाल गृहों में से केवल 54 को जेजे अधिनियम का अनुपालन करते हुए पाया गया था, और जिन 185 आश्रय गृहों का ऑडिट किया गया था, उनमें से केवल 19 में बच्चों के रिकार्ड थे।

मंत्रालय बच्चों के कल्याण, विकास और संरक्षण के लिए विभिन्न योजनाओं का संचालन कर रहा है। उपरोक्त उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए केंद्रीय मत्रिमंडल ने हाल में मिशन मोड में लागू होने वाली 3 महत्वपूर्ण अम्ब्रेला योजनाओं को मंजूरी दी है। ये है – मिशन वात्सल्य, मिशन पोषण 2.0 और मिशन शक्ति।

मिशन वात्सल्य

इस मिशन में, नीति निर्माताओं द्वारा बच्चों को सर्वोच्च राष्ट्रीय संपति में से एक के रूप में मान्यता दी गई है। इसका उद्देश्य भारत में प्रत्येक बच्चे के लिए स्वस्थ और खुशहाल बचपन सुनिश्चित करना; बच्चों के विकास के लिए संवेदनशील सहायक और समकालिक पारिस्थितिकी तंत्र को बढ़ावा देना; जेजे अधिनियम 2015 के अधिदेश को पूरा करने में राज्यों/केंद्रशासित क्षेत्रों की सहायता करना और सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त करना है।

मुख्य उद्देश्य महिलाओं और बच्चों के लिए राज्य की कारवाई में खामियों को दूर करना, लैंगिक समानता और बाल–केंद्रित कानूनों, नीतियों तथा कार्यक्रमों को बनाने के लिए अंतर–मंत्रालयी और अंतर–क्षेत्रीय अभिसरण को बढ़ावा देना है।

मिशन पोषण 2.0

यह एक एकीकृत पोषण सहायता कार्यक्रम है जो पोषण सामग्री और वितरण में महत्वपूर्ण बदलाव के माध्यम से बच्चों, किशोरियों, गर्भवती महिलाओं और स्तनपान कराने वाली माताओं में कुपोषण की चुनौतियों का समाधान करने और स्वास्थ्य, कल्याण तथा प्रतिरक्षा की पोषण करने वाले कार्यकलापों को बढ़ावा देने और विकसित करने के लिए एक अभिसरण पारिस्थितिकी तंत्र के विकास का प्रयास करता है। यह पूरक पोषण कार्यक्रम के तहत भोजन की गुणवत्ता और वितरण को अनुकूलित करने का प्रयास करता है।

कार्यक्रम के तहत, टीएचआर के पोषण संबंधी मानदंडों, मानकों, गुणवत्ता तथा परीक्षण में सुधार किया जाएगा और पांरपरिक सामुदायिक भोजन की आदतों के अलावा अधिक से अधिक हितधारक और लाभार्थी भागीदारी को बढ़ावा दिया जाएगा। पोषण 2.0 तीन महत्वपूर्ण कार्यक्रमों/योजनाओं अर्थात् आंगनवाड़ी सेवाएं, किशोरियों के लिए योजना और पोषण अभियान को अपने दायरे में लाएगा।

मिशन शक्ति

इस योजना के तहत एकीकृत देखभाल, सुरक्षा संरक्षण, पुनर्वास और सशक्तीकरण के माध्यम से महिलाओं के लिए एक एकीकृत नागरिक केंद्रित जीवनचक्र सहायता की परिकल्पना की गई है, क्योंकि वे अपने जीवन के विभिन्न चरणों में प्रगति करती हैं। मिशन शक्ति की दो उप–योजनाएं संबल और सामर्थ्य है।

संबल उप–योजना में वन स्टॉप सेंटर की मौजूदा योजना, 181 महिला हेल्पलाइन और बेटी बचाओं बेटी पढ़ाओं शामिल है। इसके अलावा, नारी अदालतों का एक नया घटक, समाज और परिवारों के भीतर वैकल्पिक विवाद समाधान और लैगिंक न्याय को बढ़ावा देने तथा सुविधा प्रदान करने के लिए महिलाओं के समूह के रूप में जोड़ा गया है। सामर्थ्य उप योजना महिलाओं के सशक्तीकरण के लिए है, जिसमें उज्जवला, स्वाधार गृह और कामकाजी महिला छात्रवास की मौजूदा योजनाएं शामिल हैं। इसके अलावा, कामकाजी माताओं के बच्चों के लिए राष्ट्रीय क्रेच योजना और प्रधानमंत्री मातृ वंदना योजना (पीएमएमवीवाई), जो अब तक अम्ब्रेला आईसीडीएस योजना के तहत रही है, को भी सामर्थ्य उप योजना में शामिल किया गया है।

तीनों मिशनों को 15वें वित्त आयोग की अवधि 2021–22 से 2025–2026 के दौरान लागू किया जाएगा।

बच्चों के लिए पीएम केयर्स योजना 29 मई 2021 को उन बच्चों की सहायता के लिए शुरू की गई थी, जिन्होंने 11 मार्च 2020 से शुरू होने वाली अवधि के दौरान माता–पिता या कानूनी अभिभावक या दत्तक माता–पिता या जीवित माता–पिता दोनों को खो दिया है। इस योजना का उद्देश्य है बच्चों के व्यापक देखभाल और सुरक्षा को सुनिश्चित करना, और स्वास्थ्य बीमा के माध्यम से उनकी भलाई को सक्षम बनाना, उन्हें शिक्षा के माध्यम से सशक्त बनाना, और उन्हें वित्तीय सहायता के साथ आत्मनिर्भर बनने के लिए तैयार करना। पीएम केयर्स फॉर चिल्ड्रन स्कीम अन्य बातों के साथ–साथ इन बच्चों को अभिसरण दृष्टिकोण, शिक्षा, स्वास्थ्य, 18 वर्ष की आयु से मासिक वजीफा और 23 वर्ष की आयु प्राप्त करने पर 10 लाख रूपये की एकमुश्त राशि सुनिश्चित करने के लिए सहायता प्रदान करती है।

आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना (पीएम–जेएवाई)

आयुष्मान भारत प्रधानमंत्री जन आरोग्य योजना सूचीबद्ध सार्वजनिक और निजी क्षेत्र के माध्यमिक और तृतीयक चिकित्सा अस्तपतालों में भर्ती के लिए प्रति परिवार वर्ष 5 लाख रूपये का कवर प्रदान करती है। पीएम केयर्स फॉर चिल्ड्रन के तहत सहायता के लिए पहचाना गया बच्चा 5 लाख रूपये के कवर का हकदार होगा। सरकार सुपोषित तथा खुशहाल बच्चों और आत्मनिर्भर महिलाओं के लिए ऐसी सेवाएं सुनिश्चित करने का प्रयास करती है जो सुलभ, सस्ती, विश्वसनीय और सभी प्रकार के भेदभाव और हिंसा से मुक्त हों।

○○○○○

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 39

स्वतंत्रता, समता एवं मानवाधिकार

– के. एस. द्विवेदी

मानवाधिकारों की वर्तमान अवधारणा अंतरराष्ट्रीय विधि में उत्पन्न हुई और इसका उद्देश्य यह रहा कि जैसे अपने देश में नागरिक को कुछ अधिकार प्राप्त हैं वैसे ही कुछ मूलभूत अधिकार मात्र मानव जाति में जन्म लेने से प्रत्येक व्यक्ति को अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी प्राप्त होने चाहिए। मनुष्य के अस्तित्व के साथ ही स्वतंत्रता की धारणा का जन्म होता है। स्वतंत्रता मानवाधिकार का अत्यंत महत्वपूर्ण पहलू है। इसके बिना मानव अधिकार ही नहीं बल्कि मनुष्य की भी कल्पना नहीं की जा सकती। सार्वभौमिक घोषणा एवं राष्ट्रीय संविधानों में स्वतंत्रता के अधिकार निहित हैं। स्वतंत्रता की रक्षा करना राज्य का उद्देश्य है। समता की भूमिका भी यही है कि वह न्याय का कार्यकारी सिद्धांत बन जाए। अतः न्याय के सिद्धांत के रूप में स्वतंत्रता एवं समता को राजनैतिक, सामाजिक, वैज्ञानिक तथा आर्थिक आदि सभी क्षेत्रों में स्थापित करने की आवश्यता है। स्वतंत्रता तथा समता का आधार व्यक्ति का अपना व्यक्तिगत है। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्तियों के समान होने के कारण राज्य की व्यवस्था में समान स्थिति से युक्त है तथा कानूनी तौर पर भी समान है। समता महत्वपूर्ण है किंतु स्वतंत्रता से संयुक्त होने पर ही इसका प्रयोग क्रियाशील हो पाता है। अधिकारों के विषय निर्धारण करते समय स्वतंत्रता एवं समता एक ही स्तर पर आते हैं। ये इतने मौलिक हैं कि समाज में वर्ग–विभेद का कोई स्थान नहीं रह जाता। इनके आधार पर ही विश्व में मानवाधिकारों की मांग और स्थापना हुई है।

''मानवाधिकार'' प्रत्यय की यह अन्तर्निहित धारणा है कि सम्पूर्ण मानव जाति एक परिवार है और मानव–परिवार राष्ट्र, राज्य, जाति, रंग या ऐसे अन्य किसी भेद के कारण विभाजित नहीं हो सकता तथापि वर्तमान समय में मानवाधिकार एक ऐसी वस्तु बन गया है जिसकी समाज में सबसे अधिक कमी प्रतीत होती है। मानवाधिकार जो केवल इसलिए प्रदत्त होने चाहिए कि मनुष्य ''मनुष्य'' है, के लिए आंदोलन चलाने और संस्थाएं बनाने की आवश्यकता आ पड़ी है। मानवाधिकारों की वर्तमान अवधारणा अन्तरराष्ट्रीय विधि में उत्पन्न हुई और इसका यह लक्ष्य रहा कि जैसे अपने देश या राष्ट्र में प्रत्येक नागरिक को कुछ अधिकार प्राप्त हैं वैसे ही कुछ मूलभूत अधिकार मात्र मानव जाति में जन्म लेने के कारण प्रत्येक व्यक्ति को भी प्राप्त होने चाहिए। नागरिक को उसके देश में या राष्ट्र में मौलिक और अपृथक्करणीय अधिकारों की बात बहुत पुरानी है, जिसे हम नैसर्गिक विधि और नैसर्गिक अधिकारों के रूप में जानते हैं। यहां ध्यान देने की बात है कि नागरिक अधिकारों और मानवाधिकारों में समानता हो सकती है किन्तु दोनों का दार्शनिक आधार बिल्कुल भिन्न है। नागरिक अधिकार किसी राष्ट्र या राज्य में उसके नागरिक को तत्वतः इस कारण कि वे नागरिक हैं, प्रदत्त हों, हैं; किन्तु मानवाधिकार का तात्विक कारण किसी देश या राष्ट्र का नागरिक होना नहीं, बल्कि मानवजाति में जन्म लेना है। मानव पूर्ववर्ती है राज्य या राष्ट्र परवर्ती। तब भी यह विरोधाभाष है कि मानव को मानवाधिकारों की अपेक्षा राष्ट्र या राज्य से करनी पड़ रही है।

मानवाधिकार कौन सा अधिकार है, इस प्रश्न का उत्तर मानव के स्वरूप, स्वभाव एवं भवितव्यता में निहित है। अधिकार एक मूल्यवान नैतिक प्रत्यय है। अधिकार की विषय वस्तु कोई महत्वपूर्ण मूल्य या वस्तु होती है। मानवाधिकार की अपेक्षा समान रूप से सब के लिए है, अतः मानवाधिकार की विषयवस्तु ऐसे मूल्य का बोधक है जिसका आंतरिक मूल्य (INTRINSIC VALUE) सबके लिए समान हो। मानवाधिकार की विषयवस्तु निर्मित करने वाले ऐसे मूल्य मनुष्य के व्यक्तित्व में विद्यमान हैं। मनुष्य का मनुष्यत्व उसकी रचनात्मकता एवं सृजनशीलता में निहित है। रचनात्मकता के अभाव में मनुष्य का मौलिक स्वरूप विकृत हो जाता है। वास्तवकिता तो यह है कि रचनात्मकता ही मनुष्य की विशिष्टता या मनुष्यत्व का निर्माण करती है। सृजनशीलता के विकास एवं पूर्ण अभिव्यक्ति के लिए स्वतंत्रता, समानता और गौरव की रक्षा के लिए शोषण से मुक्ति एवं धर्मनिरपेक्षता अनिवार्य तत्व हैं। ये मानव व्यक्तित्व के विविध आयाम हैं तथा इसके उन्नयन में ही समस्त मानवाधिकार अस्तित्ववान होते हैं। इस प्रकार मानवाधिकार व्यक्तित्व के दार्शनिक विमर्श पर आधारित होते हैं तथा इनका लक्ष्य व्यक्तित्व की सुरक्षा एवं व्यक्ति में निहित क्षमताओं का पूर्ण विकास निश्चित होता है।

मनुष्य के अस्तित्व के साथ ही स्वतंत्रता की धारणा बनती है तथा स्वतंत्रता के विचार के साथ ही मानव अस्तित्व मुखर हो पाता है। इसी अर्थ में सार्त्र ने कहा भी है कि मनुष्य स्वतंत्र है तथा स्वतंत्रता ही मानव अस्तित्व का प्राथमिक पक्ष है। स्वतंत्रता के बिना मनुष्य के वास्तविक स्वरूप को नहीं समझा जा सकता है। ऐसी स्थिति में मानवाधिकार को समझने की अनिवार्यता है।

स्वतंत्रता मानवाधिकार का इतना महत्वपूर्ण पहलू है कि इसके बिना मानव अधिकार तो दूर रहा मनुष्य की ही कल्पना नहीं की जा सकती। मानवता का समस्त इतिहास मानों इस एक शब्द में समाया हुआ है। मानव जाति के उज्जवल भविष्य का अभिव्यंजक यह शब्द है। किस प्रकार के कार्य–कलापों से कार्य–कारण भाव के नियम के अनुसार तथा साध्य साधन के तत्व का अवलम्बन कर जगत की वस्तुओं का मानव कल्याण के निमित्त उपयोग कर जनता को सम्पूर्ण स्वतंत्रता का मार्ग बताया जा सकता है, इस प्रश्न की मीमांसा ही अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र तथा समाजशास्त्र का मूल उद्देश्य है। स्वतंत्रता का सम्बन्ध मानव स्वभाव से है। मध्यकालीन सभ्यता से लेकर आज तक समाज, राज्य तथा धार्मिक संस्थाओं के विरोध में मानव, स्वतंत्रता के लिए संग्राम कर रहा है और सत्तावाद तथा संप्रभुतावाद के बदले अधिकारवाद और स्वातंत्रय को स्थापित करने का प्रयास अनवरत रूप से विद्यमान है। मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा एवं राष्ट्रीय संविधानों में स्वतंत्रता के अधिकार निहित हैं। वे स्वतंत्रता के कानूनी पक्ष का निर्माण करते हैं। इन अभिलेखों में प्रतिभूत स्वतंत्रता के मार्ग में व्यवधान अथवा स्वतंत्रता के अभाव का निषेध मात्र है। स्वतंत्रता के विधिक अधिकार का केवल यह तात्पर्य है कि व्यक्ति की स्वतंत्रता में व्यवधान उपस्थित नहीं किया जाये, विशेषरूप से राज्य द्वारा। इससे यह भी आभास मिलता है कि व्यक्ति को किसी संविधान या कानून द्वारा स्वतंत्रता दी नहीं जाती है, बल्कि स्वतंत्रता के मार्ग में व्यवधान का निषेध मात्र किया जाता हैं। स्वतंत्रता तो व्यक्ति का स्वाभाविक लक्षण है। मानव व्यक्तित्व का यह अभिन्न अंग है। संविधान एवं कानूनी संलेखों में प्रतिभूत स्वतंत्रता के तार्किक विश्लेषण से जो तथ्य स्पष्ट होते हैं, उन्हें निम्नांकित बिंदुओं में अभिव्यक्त किया जा सकता हैः

1. स्वतंत्रता मनुष्य का स्वाभाविक लक्षण है। यही स्वतंत्रता का सकारात्मक पक्ष है।

2. स्वतंत्रता का कानूनी अधिकार स्वतंत्रता के मार्ग में व्यवधान का निषेध मात्र है। अतः यह स्वतंत्रता का निषेधात्मक पहलू है।

3. राष्ट्रीय संविधानों में प्रदत्त स्वतंत्रता का अधिकार विशेष रूप से राज्य द्वारा व्यक्ति की स्वतंत्रता के निषेध का निषेध है, अर्थात् यह व्यक्ति एवं राज्य के संबंधों को रेखांकित करता है।

प्रश्न यह उठता है कि मनुष्य के लिए स्वतंत्रता को इतना अधिक महत्व क्यों दिया गया है? दूसरे प्राणियों के लिए वैसी स्वतंत्रता की अवधारणा क्यों नहीं की गयी है जैसी कि मनुष्य के लिए की जाती है? इन प्रश्नों के उत्तर के लिए हमें पुनः मानव के व्यक्तित्व के मूलभूल तत्वों का अनुशीलन एवं स्वतंत्रता के वास्तविक स्वरूप का विश्लेषण करना होगा।

टैगोर के अनुसार मनुष्य की श्रेष्ठता उसकी शक्ति या बुद्धि में नहीं अपितु स्वतंत्रता का उपभोग करने में निहित है। स्वतंत्रता के इस लक्षण के आधार पर मनुष्य रचनात्मकता प्राप्त करता है और प्रगति के लिए नित्य नयी कामना उसके अन्दर बनी रहती है। टैगोर स्वतंत्रता और संयम को एक–दूसरे का पूरक मानते हैं। टैगोर के अनुसार स्वतंत्रता का अर्थ नैतिक नियमों का निषेध नहीं है। वे नैतिक नियमों का उद्देश्यों आत्मनियंत्रण का विकास मानते हैं। टैगोर अनिवार्यता स्वीकार करते हैं, किन्तु उनकी अनिवार्यता आत्मप्रदत्त अनिवार्यता है। स्वतंत्रता की अवधारणा को टैगोर ने निम्नांकित शब्दों में व्यक्त किया है:

'सत्य के एक ओर स्वतंत्रता है, दूसरी ओर संयम।' उसका एक पक्ष कहता है, 'उसके भय से अग्नि जलती है' तो दूसरा पक्ष कहता है, 'आनन्द से ही सब वस्तुएं उत्पन्न होती हैं। नियम को अस्वीकार करना दूसरी ओर स्वतंत्रता के उपभोग की संभावना को निरस्त करना है। स्वयं चरम सत्ता भी स्वतंत्र एवं अस्वतंत्र दोनों है। ब्रह्म अपने सत्य से बद्ध एवं अपने आनन्द से मुक्त है। हम भी स्वतंत्रता का उपभोग तभी कर सकते हैं जब हम सत्य के बन्धनों को स्वीकार करें।'

अतः टैगोर के मत में स्वतंत्रता में आत्मनियंत्रण तो सन्निहित है, किन्तु अराजकता के लिए कोई स्थान नहीं है। नैतिक प्राणी के रूप में मनुष्य की स्वतंत्रता में उसके आनन्दपूर्वक समर्पण की क्षमता भी निहित है।

प्रो. के. सी. भट्टाचार्या स्वतंत्रता को मनुष्य के अनिवार्य अवयव के रूप में मानने वालों में टैगोर से भी आगे हैं। प्रो. भट्टाचार्या का पूरा दर्शन ही स्वतंत्रता के महत्व और स्वतंत्रता के स्तर के सिद्धांत पर अवलंबित है। उन्होंने सीमित इच्छा की स्वतंत्रता और असीमित स्वतंत्रता का उल्लेख करते हुए मानव का वास्तविक स्वरूप दूसरे प्रकार की स्वतंत्रता में निहित होने का उल्लेख किया है। स्वतंत्रता में उनका इतना गहरा विश्वास है कि उन्होंने मनुष्य का वास्तविक लक्षण स्वतंत्र आत्मा (सब्जेक्ट बींइग फ्री) न मानकर स्वतंत्रता के रूप में आत्मा (सब्जेक्ट ऐज फ्रीडम) माना है। वे स्वतंत्रता से मानव के संबंध मात्र से संतुष्ट नहीं हैं, बल्कि आत्मा के स्वातंत्रय में परिवर्तित हो जाने को आदर्श अवस्था मानते हैं। मनुष्य के विशुद्ध स्वरूप को ही वे स्वातंत्रय कहते हैं। इस प्रकार प्रो. के. सी. भट्टाचार्या के अनुसार स्वतंत्रता मानव के व्यक्तित्व का आवश्यक अवयव ही नहीं बल्कि उसका वास्तविक स्वरूप है। स्वतंत्रता के बिना मनुष्य की कल्पना ही नहीं की जा सकती है और स्वतंत्रता के बिना मानव का विकास भी संभव नहीं

हो सकता है। इसे हम दूसरे शब्दों में इस प्रकार कह सकते हैं कि प्रो. भट्टाचार्या के अनुसार मनुष्य के सभी प्रयास किसी वस्तु के लिए नहीं बल्कि स्वयं स्वतंत्रता के लिए होते हैं।

डॉ. राधाकृष्णन ने अपने की अवधारणा में स्वतंत्रता के अवयव पर गहरा प्रकाश डाला है। मनुष्य का सीमित से निकलकर अतिव्याप्त चेतना से तादात्म्य स्थापित करने की क्षमता को वे स्वतंत्रता कहते हैं स्वतंत्रता के आधार पर ईश्वर, ब्रह्म और मनुष्य को विश्वव्यापी आत्मा के विभिन्न पक्षों के रूप में उसे जीवात्मा कहा जाता है। जगत में अभिव्यक्त होने पर इसे ईश्वर कहते हैं और अपने असीम स्वरूप में यह ब्रह्म हो जाती है। इस प्रकार सीमित अर्थात् शरीर, मन बुद्धि में रहने के बावजूद मनुष्य का एक असीमित पक्ष भी है। डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार असीमित पक्ष ही मनुष्य का मौलिक स्वरूप है। मानव सीमित के माध्यम से इच्छा की स्वतंत्रता के आधार पर अपने असीमित स्वरूप की प्राप्ति का प्रयास करता है। इस प्रकार स्वतंत्रता मनुष्य का सबसे महत्वपूर्ण लक्षण है और वह कई रूपों में अभिव्यक्त होती है। इसी आधार पर मनुष्य आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, आदि कई प्रकार की स्वतंत्रताओं की मांग करता है। डॉ. राधाकृष्णन के अनुसार इन स्वतंत्रताओं में आत्मीय स्वतंत्रता सर्वोच्च स्थान रखती है।'

कार्ल यास्पर्स की मान्यता है कि अस्तित्व ही स्वतंत्र है। स्वतंत्रता के आधार पर कार्ल यास्पर्स ने मनुष्य का अन्य वस्तुओं और दूसरे प्राणियों से विभेद किया है। मनुष्य की स्वतंत्रता के आधार पर वे अस्तिव की अनंत सम्भावनाओं का साक्षात्कार करने की बात कहते हैं। उनका तात्पर्य है कि मनुष्य में अनंत सम्भावनायें निहित रहती है और स्वतंत्रता के आधार पर मानव उनकी अभिव्यक्ति करता है। स्वतंत्रता मनुष्य के अस्तित्व का सार है। बिना स्वतंत्रता के उसका अस्तित्व ही नहीं रहता है।

उपर्युक्त विवेचन से हम इस निष्कर्ष पर पहुंचते हैं कि मनुष्य का मौलिक स्वरूप स्वतंत्रता युक्त है। चूंकि मनुष्य को सृष्टि का केन्द्र बिन्दु माना जाता है और सारे ज्ञान–विज्ञान उसके कल्याणार्थक समझे जाते हैं इसलिए स्वतंत्रता को उसका अनिवार्य लक्षण मानना होगा। दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि इस स्थिति में मनुष्य को परम स्वतंत्र स्थिति प्रदान करना अनिवार्य होगा।

उपर्युक्त दार्शनिक विचारधाराओं में व्यक्त की गयी स्वतंत्रता की अवधारणा के तुलनात्मक अध्ययन से उसका स्वरूप भिन्न–भिन्न परिलक्षित होता है, किन्तु सभी विचारधाराओं में मनुष्य के संकल्प या इच्छा की स्वतंत्रता की अनिवार्यता की समानता है।

किसी विधि या संविधान से मनुष्य को स्वतंत्रता दी नहीं जाती है, बल्कि वह मनुष्य मात्र में स्वभावतः अन्तर्निहित रहती है। विधियों और संविधानों में उल्लिखित स्वतंत्रता के अधिकार का अर्थ केवल यह होता है कि मनुष्य का उसकी स्वभावगत स्वतंत्रता के उपभोग में कोई व्यवधान नहीं हो। अतः मनुष्य का उसकी स्वाभाविक एवं स्वरूपगत स्वतंत्रता को अप्रभावित एवं अबाधित रखना ही विभिन्न विधियों तथा संवैधानिक प्रावधानों का उद्देश्य है। मूलतः मनुष्य की स्वतंत्रता की गति स्वाभावाविक और स्वजनित है।

मानवाधिकार के रूप में स्वतंत्रता नैतिक मूल्य है जिसे नैतिक व्यवस्था के अधीन राज्य के कानून के माध्यम से अपनी पूर्णता में प्राप्त नहीं किया जा सकता किन्तु मनुष्य के नैतिक विकास के लिए

आवश्यक न्यूनतम स्वतंत्रता को अनिवार्य कर पूर्ण स्वतंत्रता के विकास का मार्ग प्रशस्त किया जा सकता है। इस प्रकार अधिकार के रूप में स्वतंत्रता नैतिक स्वतंत्रता की अनिवार्य परिस्थिति है।

स्वतंत्रता की रक्षा करना ही उद्देश्य है। अतः राजनैतिक अधिकारों का वितरण भी स्वतंत्रता के रक्षार्थ होना चाहिए। यह तभी संभव है जब अधिकारों के वितरण में व्यक्तिगत या वर्गस्वार्थ की प्रवृति न हो। यही समानता की भूमिका है तथा समानता न्याय का कार्यकारी सिद्धांत बन जाती है। न्याय यद्यपि नैतिक बल है जो मानव की अंतरात्मा से निस्सृत होता है किन्तु आधुनिक समाज का यह सबसे महत्वपूर्ण कार्यकारी नियम है। अतः न्याय के सिद्धांत के रूप में स्वतंत्रता एवं समानता को राजनैतिक, साामाजिक, वैज्ञानिक, शैक्षिक तथा आर्थिक आदि सभी क्षेत्रों में स्थापित करने की आवश्यकता है।

न्याय के सिद्धांत से यह स्थापित है कि उसका उद्देश्य समाज के सारे सदस्यों के व्यक्तित्व की सारी क्षमताओं के अधिकतम सम्भव विकास को प्रोत्साहित एवं उन्नत करना है। इस उद्देश्य से कानून अपने सदस्यों को अधिकार आबंटित करता है। इन अधिकारों के वितरण का एक क्रम है जिसमें सर्वप्रथम न्याय का स्थान है, जिसके संबंध व्यक्तित्व के परम नैतिक मूल्य तथा क्षमता से है, किन्तु सामाजिक एवं राजनैतिक क्षेत्र में यह एक नियामक मूल्य बन जाता है। न्याय से क्रमशः स्वतंत्रता समानता तथा बंधुत्व के सिद्धांत निगामित होते हैं। 'न्याय' एक मूल्य भी है और नियम भी। स्वतंत्रता के सिद्धांत के अनुसार राज्य प्रत्येक नैतिक व्यक्ति को एक स्वतंत्र अभिकर्ता के रूप में अपनी क्षमताओं को अपनी इच्छा के अनुसार विकसित करने के लिए आवश्यक परिस्थितियों का स्वतंत्रतापूर्वक उपयोग का अधिकार प्रदान कराता है। इस दृष्टिकोण से कानून की दृष्टि में सभी व्यक्ति समान होते हैं। कानून इनको उच्चतर एवं निम्नतर में वर्गीकृत नहीं करता है। प्रत्येक व्यक्ति का नैतिक मूल्य समान है। यही समानता के सिद्धांत का आधार है।

स्वतंत्रता के आधार की तरह समानता का आधार भी प्रत्येक व्यक्ति का अपना व्यक्तिगत है। प्रत्येक व्यक्ति दूसरे व्यक्तित्व के समान होने के कारण राज्य की व्यवस्था के अधीन समान स्थिति से युक्त है तथा कानूनीकरण के रूप में समान मूल्यवान है इसका तात्पर्य यह नहीं है कि प्रत्येक नैतिक व्यक्तित्व की पूर्ण क्षमता तथा उस क्षमता को विकसित करने की योग्यता सबमें समान है। क्षमताएं निश्चित रूप से भिन्न हो सकती हैं परन्तु राज्य कानूनी तौर पर समान व्यक्तित्व प्रदान करता है या स्वीकार करता है। इसका एक कारण यह है कि राज्य चाहकर भी व्यक्तिगत क्षमताओं एवं योग्यताओं का पता नहीं लगा सकता। किन्तु, दूसरा कारण एवं गहन कारण यह है कि सभी मनुष्य समानरूपा हैं, और सबकी भविष्य की संभावनाएं समान हैं, अतः राज्य कानून की दृष्टि से सबका मूल्य समान रखता है। विकास की यात्रा के प्रारंभ में राज्य सबके लिए समान परिस्थितियाँ अर्थात् अधिकार सुनिश्चित करता है। यह अलग बात है कि प्रयास के अंत में परिणाम अलग–अलग हों। फलस्वरूप समानता के सिद्धांत का आशय यह है कि अधिकारों के रूप में जो परिस्थितियाँ मेरे लिए प्रत्याभूत की गयी हैं, वहीं, उसी मात्रा में दूसरों के लिए प्रत्याभूत की जायें तथा जो दूसरों को प्रत्याभूत हैं वे मुझे भी उतनी ही प्रत्याभूत हों। उदाहरण के लिए, सम्पति का अधिकार लीजिए। राज्य सम्पति के स्वामित्व का समान अधिकार प्रदान करता है। इसका तात्पर्य यह नहीं है कि कानून समान राशि के समान स्वामित्व का अधिकार प्रदान

करें। इसका अभिप्राय केवल यह है कि कानून स्वामित्व के समान सामर्थ्य को मान्यता देता है। कानून केवल कानूनी सामर्थ्य प्रदान करता है, और ऐसा करने में वह निष्पक्षता बरतता है तो पूर्णतः समानता के सिद्धांत का पालन करता है। स्वामित्व की समानता का मतलब पदार्थ या राशि की समानता नहीं, वरन सामर्थ्य की समानता है।

समानता का सिद्धांत व्यक्तित्व के विकास के समान अवसर या अधिकार की संकल्पना से उदभूत है, अतः व्यक्तित्व की क्षमताओं का विकास परम मूल्य है। इस परम मूल्य के सापेक्ष यदि हम आर्थिक समानता के सिद्धांत का विश्लेषण करते हैं तो पाते हैं कि आर्थिक समानता एक सीमा तक ही इस परम मूल्य के लिए आवश्यक है। समानता के वे ही सिद्धांत या प्रकार उचित माने जा सकते हैं जो व्यक्तित्व की क्षमताओं के विकास में सहायक हों। क्षमता का अबाध विकास एकरूपता में संभव नहीं है। अतः अधिक आर्थिक समानता या सीमित आर्थिक समानता तो उचित हो सकती है, किंतु आत्यंतिक आर्थिक समानता को उचित नहीं ठहराया जा सकता, क्योंकि वह मौलिक व्यक्तित्व विकास के सिद्धांत के विपरीत है और विकास में बाधक भी।

समानता बहुत महत्वपूर्ण है, किंतु यह अकेले क्रियाशील नहीं हो सकती है। इसका स्वतंत्रता से संयुक्त होना इसके प्रयोग के लिए अनिवार्य है। वस्तुतः यह स्वतंत्रता की अनुगामिनी है। स्वतंत्रता का व्यक्तित्व के परम मूल्य तथा उसकी क्षमताओं के विकास के साथ अत्यंत घनिष्ठ संबंध है। स्वतंत्रता के आधार पर ही मानवी समानता का प्रतिपादन किया जाता है। स्वतंत्रता का उद्देश्य प्रत्येक व्यक्ति को उसके व्यक्तित्व की क्षमताओं के विकास का अवसर प्रदान करना है। दूसरी ओर समानता का उद्देश्य विकास तो है किंतु यह अवसर तक ही सीमित हो जाता है अन्यथा यह स्वतंत्रता का व्याघाती हो जाता है। अनिवार्य समानता जैसा कि हमने आर्थिक समानता के मामले में देखा स्वतंत्रता तथा व्यक्तिगत विकास के प्रयासों के विपरीत परिणामकारी होती है।

समानता मानवाधिकार का एक आयाम ही नहीं बल्कि मूल है जिससे मानवाधिकार निष्क्रमित होते हैं, क्योंकि समानता का तात्पर्य है निरपेक्ष समानता जिसमें वंश, धर्म, जाति, रंग एवं लिंग आदि के विभेद का कोई स्थान नहीं है। समानता की पूर्व धारणा है मानव मात्र का समान अधिकार। इस अर्थ में समानता 'निषेध' या प्रतिबंध का विरोधी प्रत्यय है, तथा यह ऐसे सभी विषयों पर लागू होता है जहां किसी प्रतिबंध की व्यवस्था है। निरपेक्ष होने से समानता विशिष्ट की विरोधी है। अतः यह विशेषाधिकार की भी विरोधी है। समान में वर्ग व्यवस्था है, प्रतिबंध और विशेषाधिकार है, अतएव जब समानता का प्रयोग समाज में होता है तो एक द्वन्द्वात्मक स्थिति उत्पन्न होती है। जिनके विशेषाधिकार या विशिष्ट स्थिति प्रभावित होती है वे इसका विरोध करते हैं। दूसरी ओर सामाजिक समानता का सिद्धांत व्यक्तित्व विकास के मूल्य पर अवलंबित है जिसमें मनुष्य होने के कारण मानव मात्र को अपने ढ़ग से व्यक्तित्व विकास के लिये स्वतंत्रता अर्थात् समान अवसर प्राप्त होना चाहिए। मनुष्य–मनुष्य के बीच बल तथा बुद्धि का प्राकृतिक अंतर है तथापि चूंकि वे 'सब मनुष्य हैं' यह उनके बीच समानता का सबसे बड़ा आधार है। इसी आधार पर मानव मात्र के बीच अधिकार एवं मर्यादा की समानता की परिकल्पना की गयी है। सभी मनुष्यों की स्वतंत्रता में भी समानता है। यह समानता प्राकृतिक है, क्योंकि सभी जन्म से

स्वतंत्र हैं।

इस विवेचन से निष्कर्ष निकलता है कि समानता स्वतंत्रता की सहगामी तथा निरपेक्ष है। स्वतंत्रता का क्षेत्र व्यक्ति, समुदाय, राज्य या संविधान द्वारा निश्चित किया जा सकता है, किंतु इसके निर्धारित हो जाने पर सबको उसका समान अधिकार स्वतः प्राप्त हो जाता है। समानता इतनी मौलिक एवं अहम है कि समाज में वर्ग–विभेद का कोई स्थान नहीं रह जाता। यहां तक कि शासित और शासक जो अधिकार एवं स्वतंत्रता के विषय निर्धारित करते हैं, दोनों एक ही स्तर पर आ जाते हैं। उनकी परिस्थिति में कोई अंतर नहीं रह जाता। समानता का सार मानव व्यक्तित्व में अन्तर्वलित, अंतर्निहित, उससे अपृथक्करणीय और जन्मजात है। मानव मात्र की विशिष्टिता या मानव व्यक्तित्व की अद्वितीय प्रकृति से समानता अवतरित होती है। इसी आधार पर सम्पूर्ण विश्व में मानवाधिकारों की मांग और स्थापना हुई है। (राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग से साभार)

ooooo

"शिक्षा से मेरा अभिप्राय बालक तथा मनुष्य में अंतर्निहित शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक श्रेष्ठतम को प्रकाश में लाना है।"

– महात्मा गांधी

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 46

बढ़ते अपराध और असंतुलित होता समाज

– ज्योति सिडाना

किसी भी समाज में अपराध का बढ़ना, समाज में असंतुलन की स्थिति पैदा करता है। इसलिए भारत में बढ़ती अपराध की दर चिंता का कारण बनता जा रहा है। ऐसा नहीं कि हमारे देश में अपराध रोकने के लिए कोई कानून नहीं है, या अपराधियों को दंडित करने के प्रावधान नहीं हैं, पर यह कह सकते हैं कि संभवतः लोगों में कानून का भय समाप्त हो चुका है। वैसे तो हमारे संविधान में लिखा है कि कानून की नजर में सभी समान हैं, लेकिन क्या वास्तव में यह सिद्धांत मूर्त रूप ले पाया है? समाज वैज्ञानिक फ्रैंक पीयर्स का मत है कि कानूनों का लाभ दिखने में ऐसा लगता है कि अधीनस्थ लोगों को मिलता है, जबकि वास्तव में यह शासक वर्ग का उपकरण है और उनके लाभ के लिए ही सक्रिय होता है। संभवतः यह भी एक कारण हो सकता है कि अपराध की दर में दिन–प्रतिदिन वृद्धि हो रही है।

हाल ही में जारी राष्ट्रीय अपराध रिकार्ड ब्यूरो यानी एनसीआरबी के आंकड़ों के अनुसार 2021 में महिलाओं के विरूद्ध प्रति घंटे 49 अपराध दर्ज किए गए। यानी एक दिन में औसतन 86 मामले दर्ज किए गए। 2021 में बलात्कार के 31,677 मामले दर्ज हुए, जबकि 2020 में यह संख्या 28,046 थी। इसी तरह अगर राज्यवार महिलाओं के विरूद्ध अपराध की दर देखी जाए तो राजस्थान (6,337) पहले स्थान पर है, फिर मध्य प्रदेश (2947), महाराष्ट्र (2496), उत्तर प्रदेश (2845) और दिल्ली (1250) है। महिलाओं के विरूद्ध अपराधों में बलात्कार, हत्या के साथ बलात्कार, दहेज, तेजाब हमले, आत्महत्या के लिए उकसाना, अपहरण, जबरन शादी, मानव तस्करी, आनलाइन उत्पीड़न जैसे अपराध शामिल हैं। समाजशास्त्रीय दृष्टि से देखें तो जब समाज में अपराध की दर असामान्य रूप से बढ़ने लगती है तो इसका स्पष्ट अर्थ होता है कि उस समाज के नागरिकों में सामूहिक भावनाओं के प्रति प्रतिबद्धता बहुत कमजोर है। यह भी तथ्य है कि ऐसे समाज में प्रगति और परिवर्तन की संभावनाएं कम हो जाती हैं। अपराध के कारणों में हम निर्धनता, बेरोजगारी, गैरबराबरी, शोषण, सांप्रदायिकता, दंगे–फसाद आदि की चर्चा कर सकते हैं।

विशेषज्ञ मानते हैं कि अश्लील विज्ञापनों और नग्न प्रदर्शनों ने समाज में व्यभिचार को बढ़ावा दिया है। हर व्यक्ति रातोंरात अकूत धन कमाना चाहता है, परिणामस्वरूप समाज में अपराध तेजी से बढ़ रहा है। संसाधनों का असमान वितरण, रोजगार के अवसरों की कमी, जाति और भाई भतीजावाद के आधार पर योग्यता की उपेक्षा आदि ऐसे पक्ष हैं, जो युवाओं/किशोरों को अपराध की ओर धकेलते हैं। आज के उपभोक्तावादी समाज में व्यक्ति अपनी आवश्यकताओं को नहीं, बल्कि लालसाओं को पूरा करने पर बल देता है। और यह सच है कि आवश्यकताएं तो पूरी की जा सकती

हैं, लेकिन लालच कभी समाप्त नहीं होता। अब अपराधियों को समाज या कानून का भय नहीं होता, क्योंकि नई तकनीक आने के बाद साइबर अपराध की घटनाएं भी बढ़ने लगी हैं। अपराधी अनेक छद्म पहचानों से आपराधिक गतिविधियों को आसानी से अंजाम देते हैं।

सरकारी आंकड़ों के मुताबिक राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली पूरे देश में महिलाओं के लिए सबसे असुरक्षित शहर है। निर्भया कांड के दस साल बाद भी कोई खास सुधार या बदलाव नहीं हुआ है। दिल्ली में पिछले साल यानी 2021 में हर दिन दो नाबालिग लड़कियों से बलात्कार हुआ। हाल ही में प्रकाशित 'क्राइम इन इंडिया 2021' रिपोर्ट के अनुसार राज्य में 2021 में बलात्कार, अपहरण और पति या उसके रिश्तेदारों द्वारा क्रूरता के मामलों में भी भारी वृद्धि देखी गई। दिल्ली के बाद मुंबई, बंगलुरू जैसे विकसित और स्मार्ट महानगरों का स्थान आता है, जहां इस तरह के अपराध अधिक होते हैं। विकसित और प्रगतिशील नगरों और राज्यों में अपराध की घटनाएं अधिक हो रही हैं, तो क्या यह तर्क दिया जा सकता है कि विकास और अपराध के बीच कोई सहसंबंध है। चूंकि आंकड़ों से ज्ञात होता है कि जिन नगरों में विकास अधिक हुआ है वहां अपराध की दर भी बढ़ी है।

कुछ दिनों पहले झारखंड के दुमका की घटना ने फिर महिला सुरक्षा को लेकर सरकारों के दावों के सच को उजागर कर दिया। बताया जा रहा है कि आरोपी लड़का लड़की से एकतरफा प्यार करता था और लंबे समय से युवती को परेशान कर रहा था। जब युवती से सकारात्मक प्रतिक्रिया नहीं मिली तो उसने रात को युवती के कमरे में खिड़की से पेट्रोल छिड़क कर आग लगा दी। अगर यह प्यार है तो फिर नफरत की परिभाषा क्या होगी? आखिर यह कैसा समाज उभर रहा है जहां भावनाएं महत्वहीन या कहें कि अर्थहीन हो गई हैं। क्या भावना–रहित मानव की संकल्पना अस्तित्व में आ रही है। शायद हां, तभी मनुष्य मशीनों में भावनाएं ढूंढ और मनुष्य को मशीन में बदल रहे हैं। इसिलए अपराध करने वाला अपरिचित हो, इसकी संभावनाएं तुलनात्मक रूप से कम होती हैं। महिलाओं के विरूद्ध होने वाले अपराधों में अधिकांशतः उनका अपना ही कोई नजदीकी या परिवार का सदस्य शामिल होता है (जैसा भाई, पिता, पुत्र, पति, ससुर, मित्र)। प्रत्येक सार्वजनिक मंच से महिला सुरक्षा के दावे तो किए जाते हैं, मगर यथार्थ में उन दावों को यर्थाथ में बदलने के लिए कुछ खास नहीं किया जाता। यही कारण है कि महिलाओं के विरूद्ध अपराधों को रोक पाना संभव नहीं हो रहा। कभी साक्ष्यों के अभाव में, कभी ढुलमुल न्यायायिक प्रक्रिया के कारण और कभी आर्थिक और राजनीतिक प्रभुत्व के कारण दोषी को सजा मिल ही नहीं पाती। ऐसे में कानून के भय का समाप्त होना स्वाभाविक है। यह भी एक तथ्य है कि वैश्वीकरण के बाद से धन और शक्ति का असमान वितरण तथा प्रौद्योगिकी का तीव्र विकास भी अपराध का महत्वपूर्ण कारण बन कर उभरा है।

इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि बलात्कार स्त्रीत्व का अपमान तो है ही, एक जघन्य अपराध भी है। इसे एक विरोधाभाष ही कहा जा सकता है कि एक तरफ हम विश्व मंच पर

महिला सशक्तीकरण, लैंगिक समानता तथा विकास कार्यों में महिलाओं की समान सहभागिता जैसे मुद्दों पर अपनी आवाज बुलंद कर रहे हैं (या दिखावा कर रहे हैं), दूसरी तरफ महिलाओं के विरूद्ध बढ़ती हिंसा और दुर्व्यवहार के मामलों पर मौन संस्कृति के पक्षधर बने हुए हैं। एक तरफ नवरात्रियों में कन्याओं का पूजन किया जाता है, उनकी पूजा करके उनसे सुख समृद्धि की कामना की जाती है और दूसरे ही दिन किसी कन्या के साथ दुर्व्यवहार करके उससे जीने का अधिकार ही छीन लिया जाता है इसे (पुरूष) समाज का दोहरापन ही कहा जा सकता है। महिला, दलित और अल्पसंख्यक वर्ग के संदर्भों में क्यों संविधान की परिभाषा बदल जाती या बदल दी जाती है? अगर कानून, संविधान और न्यायालय जैसी सामाजिक नियंत्रण की संस्थाएं भी पूर्वाग्रहों से निर्देशित होती हैं तो कैसे संभव है कि इन अपराधों को रोका जा सके या फिर महिलाओं, दलितों और अल्पसंख्यकों का कोई अलग संविधान निर्मित करना होगा?

अपराध किसी भी प्रकार का हो या किसी के प्रति भी हो, हर स्थिति में समाज में विघटन और बिखराव ही उत्पन्न करता है। यह सच है कि अपराध को समाज से पूर्णतः समाप्त नहीं किया जा सकता, क्योंकि समाज द्वंद्वात्मकताओं से निर्मित एक यथार्थ है, लेकिन कानून के समक्ष सभी नागरिकों की समानता को तो स्थापित किया ही जा सकता है, ताकि एक न्यायपूर्ण समाज की स्थापना को संभव बनाया जा सके। इसके लिए जरूरी है कि राज्य, पुलिस, समाज और न्यायायिक संस्थाएं प्रतिबद्धता के साथ अपनी भूमिका का निर्वाह करें। (साभार जनसत्ता)

ooooo

हमारे लेखक

कल्पना कौशिक
निदेशक
भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ
17 बी., आई. पी. एस्टेट
नई दिल्ली –110002

सौरभ मिश्र
सहायक अध्यापक
राजकीय इण्टर कालेज धोबीघाट
पौड़ी गढ़वाल
उत्तराखण्ड

राकेश कुमार सिंह
वरिष्ठ प्रवक्ता
शिक्षा शास्त्र विभाग
दी. द. उ. गोरखपुर विश्वविद्यालय
गोरखपुर
उत्तर प्रदेश

रमेश तिवारी
64 बी, फेज –II
डी.डी.ए. फ्लैट
क्टवारिया सराय, नई दिल्ली

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 49

भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ

कार्यकारिणी समिति

अध्यक्ष
डा. एल. राजा

बहिर्गामी अध्यक्ष
श्री कैलाश चौधरी

उपाध्यक्ष
श्रीमती राजश्री बिस्वास
प्रो. सरोज गर्ग
प्रो. राजेश
प्रो. एस. वाई. शाह

महासचिव
श्री सुरेश खण्डेलवाल

कोषाध्यक्ष
डा. पी. ए. रेड्डी

संयुक्त सचिव
श्री मृणाल पन्त

सह–सचिव
डा. डी. उमा देवी
श्री राजेन्द्र जोशी
श्री ए. एच. खान
श्री हरीश कुमार एस.

सदस्य
सुश्री निशात फारूख
डा. आशा आर पाटिल
डा. आशा वर्मा
श्री वाई एम जनानी
श्री वाई. एन. शंकरेगोडा
डा. वी. रेघु

सहयोजित सदस्य
प्रो. अशोक भटट्राचार्य
श्रीमती इन्दिरा राजपुरोहित
डा. डी. के. वर्मा

Final PS Jul-Dec'22_feb'11 pror shiksha.qxd 12/1/2022 3:30 PM Page 50

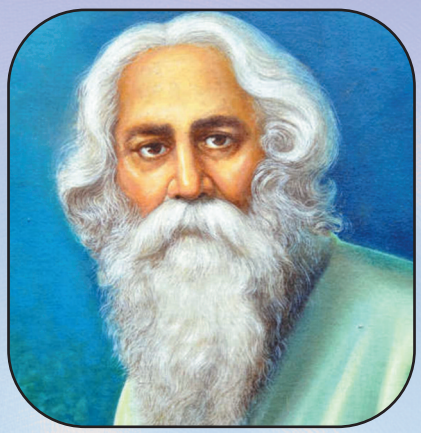

"वैयक्तिक जीवन से सामुदायिक जीवन में,
सामुदायिक जीवन से विश्वजीवन में और
विश्वजीवन से अनंत की ओर बढ़ना ही
आत्मा की स्वाभाविक प्रगति है।"

– गुरूदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर

स्वत्वधिकारी भारतीय प्रौढ़ शिक्षा संघ के लिए सुरेश खण्डेलवाल द्वारा
17–बी, आई.पी. एस्टेट, नई दिल्ली–2 से प्रकाशित, सम्पादित और उनके द्वारा
मैसर्स – ग्राफिक वर्ल्ड, 1686, कूचा दखिनी राय, दरियागंज, नई दिल्ली–2 से मुद्रित।
सम्पादक : सुरेश खण्डेलवाल